अरफ़ात किरण

मिल्लत-ए-इस्लामिया की शान

"यह वह मिल्लत है जो डूबती हुई कश्ती के किनारे तक पहुंचा सकती है और किसी गिरते हुए समाज को जो ज़मीन में बिल्कुल धंस रहा और और दलदल में फंस रहा हो और जो खुदकुशी और खुदसोज़ी पर आमादा है बचा सकती है, इसलिए कि इसके पास वह आसमानी किताब है, इसके पास नबी का वह तरीक़ा है, इसके पास वह ईमान मौजूद है जो उसको ख़ासिल दौलतपरस्त सत्तावादी और भौतिकवादी बनने से रोकता है, यह वह अकेली मिल्लत है जिसको इस ज़िन्दगी के बाद दूसरी ज़िन्दगी का यक़ीन है।"

हज़रत मौलाना सैय्यद अबुल हसन अली नदवी (रह०)

मर्कजुल इमाम अबिल हसन अल नदवी
दारे अरफ़ात, तकिया कलां, रायबरेली

June
2022

मायूसी की नहीं ईमान के जज़्बे की ज़रूरत

"अब हिन्दुस्तान की सियासत का रुख़ बदल चुका है, अब यह हमारे अपने दिमाग़ों पर मुनहसिर है कि हम किसी अच्छे अंदाज़े फ़िक्र में सोचते हैं या नहीं?

अज़ीज़ों! हरास का यह मौसम आरज़ी है, मैं तुमको यह यक़ीन दिलाता हूं कि हमको हमारे सिवा कोई हरा नहीं सकता है। मैंने तुम्हें हमेशा कहा और आज फिर कहता हूं कि तज़बज़ुब का रास्ता छोड़ दो, शक से हाथ उठा लो और बदअमली को तर्क कर दो। यह देखो कि मस्जिद के मीनार तुमसे झुक कर सवाल करते हैं कि तुमने अपनी तारीख़ के सफ़हात को कहां गुम कर दिया है, अभी कल की बात है कि यहीं जमुना के किनारे तुम्हारे क़ाफ़िले ने वुज़ू किया था और आज तुम हो कि तुम्हें यहां रहते हुए ख़ौफ़ महसूस होता है।

अज़ीज़ो! अपने अन्दर एक तब्दीली पैदा करो, जिस तरह आज से कुछ अर्सा पहले तुम्हारे जोश–ख़रोश बेजा थे, उसी तरह आज तुम्हारा यह ख़ौफ़ व हरास भी बेजा है, मुसलमान और बुज़दिली और मुसलमान और इश्तिआल एक जगह जमा नहीं हो सकते, सच्चे मुसलमान को न तो कोई तमअ हिला सकती है और न कोई ख़ौफ़ डरा सकता है।

अज़ीज़ो! तब्दीलियों के साथ चलो, यह न कहो कि हम इस बदलाव के लिए तैयार न थे, बल्कि अब तैयार हो जाओ, सितारे टूट गए, लेकिन सूरज तो चमक रहा है, उससे किरनें मांग लो और उन अंधेरी राहों में बिछा दो, जहां उजाले की सख़्त ज़रूरत है, मैं तुम्हें यह नहीं कहता हूं कि तुम हाकिमाना इक़्तिदार की मदद से वफ़ादारी का सर्टिफ़िकेट हासिल करो और कासा लेसी की वही ज़िन्दगी अख़्तियार करो जो ग़ैरमुल्की हाकिमों के अहद में तुम्हारा शेआर रहा है। मैं कहता हूं कि जो उजले नक़्श व निगार तुम्हें इस हिन्दुस्तान में माज़ी की यादगार के तौर पर नज़र आते हैं, वह तुम्हारा ही काफ़िला लाया था, उन्हें भुलाव नहीं, उन्हें छोड़ो नहीं, उनके वारिस बनकर रहो और समझ लो कि अगर तुम भागने के लिए तैयार नहीं तो फिर तुम्हें कोई ताक़त भगा नहीं सकती। आओ अहद करें कि यह मुल्क हमारा है, हम इसके लिए हैं और इसकी तक़दीर के बुनियादी फ़ैसले हमारी आवाज़ के बग़ैर अधूरे रहेंगे।

आज ज़लज़लों से डरते हो? कभी तुम ख़ुद एक ज़लज़ला थे, आज अंधेरे से कांपते हो? क्या याद नहीं रहा कि तुम्हारा वजूद एक उजाला था, यह बादलों की सैल क्या है कि तुमने भीग जाने के ख़तरे से अपने पाएचे चढ़ा लिए हैं, वह तुम्हारे ही बुज़ुर्ग थे जो समन्दरों में उतर गए, पहाड़ों की छातियों को रौंद डाला, बिजलियां आयीं तो उन पर मुस्करा दिये, बादल गरजे तो क़हक़हों से जवाब दिया, सर सर उठी तो रुख़ फेर दिया, आंधियां आईं तो उनसे कहा कि तुम्हारा रास्ता यह नहीं है, यह ईमान की जांकनी है कि शंहशाहों के गिरेबानों से खेलने वाले आज ख़ुद अपने ही गिरेबान के तार बेच रहे हैं और ख़ुदा से इस दर्जे ग़ाफ़िल हो गए हैं कि जैसे उस पर कभी ईमान ही न था।"

मौलाना अबुल कलाम आज़ाद (रह०)

(आज़ाद की तक़रीरें: १६९–१७३)

بِسْمِ اللَّهِ الرَّحْمَنِ الرَّحِيمِ

मासिक

अरफ़ात किरण

रायबरेली

अंक: ६ | जून २०२२ ई० | वर्ष: १४

संरक्षक: हज़रत मौलाना सैय्यद मुहम्मद राबे हसनी नदवी (अध्यक्ष – दारे अरफ़ात)

सम्पादक

बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

सम्पादकीय मण्डल

मुफ़्ती राशिद हुसैन नदवी

अब्दुस्सुबहान नाख़ुदा नदवी

महमूद हसन हसनी नदवी

सह सम्पादक

मो० नफ़ीस ख़ॉ नदवी

अनुवादक

मोहम्मद सैफ़

मुद्रक

मो0 हसन नदवी

अल्लाह के अज़ाब को दस्तक न दें!

अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया:

"रसूलुल्लाह (स०अ०व०) ने फ़रमाया: बिलाशुब्हा जो लोग ज़ालिम को ज़ुल्म करते हुए देखें और उसे न रोकें तो क़रीब है कि अल्लाह की तरफ़ से उन पर अज़ाब नाज़िल हो जाए।"

सुनन तिरमिज़ी: 2168

E-Mail: markazulimam@gmail.com

www.abulhasanalinadwi.org

मर्कज़ुल इमाम अबिल हसन अल–नदवी दारे अरफ़ात, तकिया कलां रायबरेली, यू०पी0.229001

प्रति अंक 15रू

मो० हसन नदवी ने एस० ए० आफसेट प्रिन्टर्स, मस्जिद के पीछे, फाटक अब्दुल्ला खॉ, सब्ज़ी मण्डी, स्टेशन रोड रायबरेली से छपवाकर आफिस अरफ़ात किरण, मर्कज़ुल इमाम अबिल हसन अल–नदवी, दारे अरफ़ात, तकिया कलां रायबरेली से प्रकाशित किया।

वार्षिक 100रू0

Markazul Imam Abil Hasan Al-Nadwi Samiti (Punjab National Bank) A/c No. 6127002100000339 (IFSC: PUNB0612700)

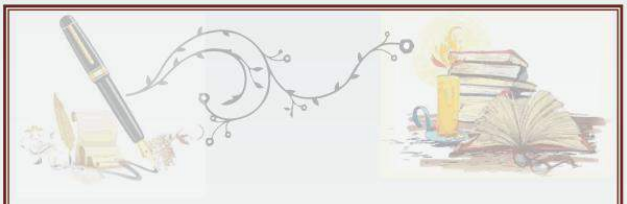

लज़्ज़त काम व दहन ...

जनाब आमिर उस्मानी (रह०)

अगरचे लज़्ज़त काम व दहन फ़राहम है
मगर दिलों पर बड़ी बेकसी का आलम है

न पास-ए-मेहर व वफ़ा है न रब्त-ए-बाहम है
नुजूम-ए-ताना-ए-बल्ब हैं यह इब्न-ए-आदम है

न रक़म हुआ था किसी दर पे खुदा के सिवा
वह सर खुदा के सिवा आज हर जगह रक़म है

बहुत है इश्क़ का एक इल्तिफ़ात-ए-दर परदा
मगर हवस को निशात-ए-दवाम भी कम है

ज़बां पे इश्क़ के नग़मे दिलों में सोरिशे ग़म
यह ज़िन्दगी तो नहीं ज़िन्दगी का मातम है

मैं चल पड़ा हूं उसी मंज़िले हसीं की तरफ़
कि जिसकी राह में कर्बो बला मुस्लिम है

न इज़्तिराब, न दर्द व खलिश, न सोज़ व गुज़ार
दिले खराब हमें तेरी मौत का ग़म है

यह किस मक़ाम पे लाया है मुझको दिल की जहां
हर एक ताज़ा जराहत का नाम मरहम है

सुकूने मंज़िले मक़सूद के तमन्नाई!
यह हमसे पूछ मुहब्बाते जिहादे पैहम है

हवा है जोशे अमल और भी फ़ज़ूं आमिर
खुदा का शुक्र कि हमसे ज़माना बरहम है।

इस अंक में:

अधिकार क्षेत्र व कार्यक्षमता.....3

बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

मुल्क की तामीर व तरक़्क़ी में मुसलमानों का किरदार.....4

हज़रत मौलाना सैय्यद अबुल हसन अली हसनी नदवी

हज़रत मूसा व ख़िज़र (अलैहिस्सलाम) का क़िस्सा.....6

हज़रत मौलाना सैय्यद राबे हसनी नदवी

रास्ते बन्द हैं सब दावत के रास्ते के सिवा.....8

मौलाना ख़ालिद सैफुल्लाह रहमानी

इल्म माल के अधीन न हो.....11

हज़रत मौलाना सैय्यद अब्दुल्लाह हसनी नदवी (रह०)

सच्चाई क्या है?.....12

बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

निकाह के फ़ज़ाएल, शरई हैसियत और चन्द एहकामात.....13

मुफ़्ती राशिद हुसैन नदवी

मिल्लत-ए-इब्राहीमी और सुन्नत-ए-नबवी (स०अ०व०).....15

अब्दुस्सुब्हान नाख़ुदा नदवी

ताक़त का नशा.....17

मुहम्मद अरमुग़ान बदायूंनी नदवी

इन्सानियत के बदलते पैमाने.....19

मुहम्मद नफ़ीस ख़ाँ नदवी

सम्पादकीय

अधिकार क्षेत्र व कार्यक्षमता

बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

दुनिया इस वक़्त जिस तरह तबाही के रास्ते पर है और क्या यूरोप व अमरीका और क्या शिर्क व कुफ़्र के मरकज़' खुद इस्लामी दुनिया और मरकज़–ए–इस्लाम में जिस तेज़ी के साथ इस्लाम से दूरी बढ़ती नज़र आ रही है और जिस तरह वहां के अरबाब–ए–इक़्तिदार ने बड़ी ताक़तों के सामने हथियार डाल दिये हैं, वह मौजूदा दौर का सबसे बड़ा अलमिया है। इस्लाम की हिफ़ाज़त का वादा अल्लाह का है, वह क़यामत तक रहेगा, वह न मिट सका है न मिट सकेगा और जो पूरी तरह इससे वाबस्तगी अख़्तियार करेगा वह भी जहान में रहेगा, बक़ौल शायरः

जहां में अहले ईमां सूरत–ए–खुरशीद जीते हैं। इधर डूबे उधर निकले उधर डूबे इधर निकले।।

दुनिया में जहां भी निज़ामे शरीअत से बग़ावत नज़र आएगी, इसको दिल से बुरा समझना, इस पर ज़बान खोलना ईमान की अलामत है और अगर कोई इसको दिल से बुरा नहीं समझता तो उसके बाद ईमान भी ख़तरे में है। हदीस में आता है कि (इसके बाद तो राई बराबर ईमान बाक़ी नहीं रहता) (मुस्लिम शरीफ़) यह इस उम्मत की ख़ासियत है कि इसको दुनिया के एहतिसाब के लिए पैदा किया गया है, और इक़बाल ने शैतान की ज़बान से जो कहा है वह एक हक़ीक़त हैः

हर नफ़्स डरता हूं इस उम्मत की बेदारी से मैं। है हक़ीक़त जिसके दीं की एहतिसाबे कायनात।।

एहतिसाबे कायनात का यह फ़रीज़ा इस उम्मत के उलमा और दाइयों को अदा करना है। कमज़ोरियों की निशानदेही करनी है। हक़ाएक़ से बाख़बर करना है। चैलेंजेज़ से आगाह करना है। मसाएल का हल तलाश करना है और उम्मत की रहबरी का काम अंजाम देना है। लेकिन यह सबकुछ अपने–अपने दायरे अख़्तियार में रहकर करना है। उम्मत के अन्दर बड़ा मर्ज़ यह पैदा हो गया है कि जो अपने अख़्तियार का दायरा है उस पर तवज्जे नहीं की जाती और जो दूसरों के दायरे अख़्तियार के काम है, सारी सलाहियतें उन पर सर्फ़ की जाती हैं। इसमें कोई शुब्हा नहीं कि तवज्जे दहानी उलमा का काम है। एहतिसाबे दीं उलमा की ज़िम्मेदारी है। लेकिन ऐसा न हो किः

सारे जहां का जाएज़ा। अपने जहां से बेख़बर।।

एहतिसाबे कायनात करने वालों की बड़ी ज़िम्मेदारी एहतिसाबे नफ़्स की भी है। जो काम हम कर सकते हैं, वह हमने न किया, तो जो अख़्तियार आज हमें हासिल हैं, कहीं वह भी छिन न जाएं। अल्लाह ने जो–जो दायरा–ए–अख़्तियार हमें दिया है, अगर उनसे हमने फ़ायदा न उठाया तो कहीं वह दायरा और तंग न हो जाए। दुनिया के हालात हमें इसकी आगाही दे रहे हैं और पुकार–पुकार कर कह रहे हैं कि आज जो तुम कर सकते हो वह भी तुमने न किया तो आने वाला कल तुम्हारे लिए और तंगी पैदा करने वाला है।

अपने–अपने दायरा–ए–अख़्तियार को देखते हुए हम सबको अपनी–अपनी कूव्वत–ए–कार को बढ़ाने की ज़रूरत है। अपनी इस ईमानी ताक़त और अमली कूव्वत हम दायरे को और वसीअ कर सकते हैं। जो वसाएल व असबाब मुमकिन हों, उनको अख़्तियार करके रास्ते खोले जा सकते हैं। अल्लाह तअला जांफ़िशानी करने वालों की मेहनत ज़ाया नहीं फ़रमाता है। अल्लाह के लिए, अल्लाह के रास्ते में जो कुर्बानियां दी जाती हैं वह रंग लाती हैं। ज़रूरत इस बात की है कि हम जो कर सकते हैं, जो अल्लाह ने हमारे दायरे अख़्तियार में रखा है, हम उधर क़दम बढ़ाएं, अल्लाह तआला की मदद शामिले हाल होगी। हदीसे कुदसी में हैः

''मैं अपने बंदे के साथ उसके गुमान के मुताबिक़ हूं, लिहाज़ा जब वह मुझे याद करता है तो मैं भी उसे याद करता है और अगर वह मुझे किसी मजलिस में याद करता है तो मैं उसे उससे बेहतर मजलिस में याद करता हूं और अगर वह मुझसे एक बालिश्त क़रीब होता है तो मैं उससे एक हाथ क़रीब हो जाता हूं और अगर वह मुझसे एक हाथ क़रीब होता है तो मैं उससे दो हाथ क़रीब होता हूं और अगर वह मेरी तरफ़ चल कर आता है तो मैं उसके पास दौड़कर आ जाता हूं।'' (बुख़ारी)

मुल्क की तामीर व तरक़्क़ी में मुसलमानों का किरदार

हज़रत मौलाना सैय्यद अबुल हसन अली हसनी नदवी (रह०)

इस वक़्त हमें सबसे ज़्यादा जिस चीज़ से परहेज़ करना चाहिए वह इन्तिशार, जमाअती अनानियत, गिरोही अस्बियत और जज़्बा–ए–तफ़व्वुक़ है। ख़ुदा हमको इस नाज़ुक तरीन लम्हे पर हमारे नुफ़ूस और हमारे दिलों की बीमारी और बेराह रवी से बचाए और हमको हमारे नफ़्सों के हवाले न करे।

हिन्दुस्तान में मुसलमान पांच करोड़ की तादाद में है और हिन्दुस्तान के न मज़हबी दस्तूर इनको बराबर का शहरी तस्लीम किया है और इनके तमाम हुक़ूक़ और तहफ़्फ़ु ज़ात की ज़मानत दी है, जो किसी आज़ाद जम्हूरी मुल्क में किसी आज़ाद और बाइज़्ज़त शहरी को हासिल हो सकती है। उनके इस फ़ैसले ने कि वह हिन्दुस्तान ही में रहेंगे और हिन्दुस्तान ही को अपना वतन समझते हैं, अख़लाक़ी, सियासी, क़ानूनी और दस्तूरी हैसियत से उनको वह तमाम हुक़ूक़ व फ़वाएद और आज़ादियों का हक़दार बना दिया है, जो किसी मुल्क के किसी बेहतर से बेहतर शहरी को हासिल होनी चाहिए। वह अपनी तादाद के लिहाज़ से दुनिया के बहुत से मुल्कों की पूरी आबादी से ज़्यादा और वसीअ दुनियाए इस्लाम में तीसरे नम्बर पर हैं। पाकिस्तान और इन्डोनेशिया के कसीरुत्तादाद और तक़रीबन ख़ालिस मुसलमान आबादी वाले मोमालिक के बाद इन्हीं का नाम आता है। और कहीं एक जगह मुसलमानों की इतनी बड़ी आबादी और इतनी बड़ी तादाद नहीं पायी जाती। इस अददी हैसियत के मासवा वह अपनी बहुत सी फ़िकरी, ज़हनी, इल्मी व अख़लाक़ी सलाहियतों के ऐतबार से आलमे इस्लाम में मुमताज़ मक़ाम रखते हैं और बाज़ हैसियतों से वह पूरे आलमे इस्लाम में फ़ायक़ हैं। वह बहुत से ज़हनी व इल्मी शोबों में आज़ाद मुस्लिम मुमालिक की भी मदद व रहनुमाई करने की अहलियत रखते हैं। और उनमें अब भी उनकी इंफ़ादियत तस्लीम की जाती है और बहुत सी अख़लाक़ी, अमली, इन्तिज़ामी और ज़हनी सलाहियतों के लिहाज़ से वह हिन्दुस्तान की अक्सरियत और तमाम दूसरे फ़िरक़ों के मुक़ाबले में मुमताज़ हैं। अक़ीदा–ए–तौहीद, इस्लामी अख़लाक़, अद्ल व मसावात के इस्लामी उसूल, वुसअते क़ल्ब व वुसअते नज़र, कायनाते मख़लूक़े ख़ुदा, इन्सानी बिरादरी और इन्सानी जान के क़द्र व क़ीमत के मुताल्लिक़ इस बुनियादी नुक़्ताए नज़र कि बिना पर जो इस्लाम ने उनको अता किया है, उनमें तामीर का जज़्बा, ताऊन और बक़ाए बाहम की सलाहियत, दूसरों से ज़्यादा मौजूद है और इस चीज़ ने उनको ज़्यादा से ज़्यादा बेआज़ार, इन्सान दोस्त, एहसान शनास और मुल्क का वफ़ादार बना दिया है। उन्होंने इस मुल्क की जंग आज़ादी का आग़ाज़ किया और इसमें क़ायदाना हिस्सा लिया और मजमूई हैसियत और अपनी तादाद के लिहाज़ से सबसे ज़्यादा क़ुर्बानियां पेश की, वह दुनिया की दूसरी वसीअ तरीन बिरादरी (मिल्लत–ए–मुस्लिमां) का एक अहम और तारीख़ी जुज़ हैं, जो सारी दुनिया में फैली हुई है और जो कम से कम दो बर्रे आज़मों (एशिया और अफ़्रीक़ा) में अव्वलीन हैसियत रखती है। और दुनिया के एक बड़े मरकज़ सियासते मश्रिक़े वुस्ता पर तन्हा हावी है। और हिन्दुस्तानी मुसलमान इन तमाम मोमालिक से बेहतर ताल्लुक़ात पैदा करने के लिए बेहतरीन ज़रिया साबित हो सकते हैं। बल्कि एशिया की जो होशमंद और हक़ीक़त पसंद क़यादत ख़ुलूस और संजीदगी के साथ इस बिरादरी का एतमान हासिल करेगी वह अपने को उसका सच्चा दोस्त और मुख़्लिस रफ़ीक़ साबित करेगी। वह मश्रिक़ की सबसे बड़ी ताक़त बन जाएगी।

इन सब बदीही हक़ाएक़ का लाज़मी और फ़ितरी तक़ाज़ा था कि मुसलमानों को इस मुल्क में अमलन वह सबकुछ हासिल हो जो इनको दस्तूर के औराक़ पर उसूली और क़ानूनी तौर पर हासिल है। यहां के ज़हन से अक्सरियत व अक़्लयित का तसव्वुर भी महव हो चुका हो और सिर्फ़ हिन्दुस्तानी का तसव्वुर बाक़ी रह गया हो। किसी मुसलमान के साथ किसी इम्तियाज़ी सुलूक का तस्व्वुर व इमकान भी नाजायज़ व ऐसा क़ौमी व मुल्की जुर्म समझा जाता हो बड़ी से बड़ी सज़ा का मुस्तहिक़

है। एक–एक शख़्स की जान और इज़्ज़त, इबादतगाहों से ज़्यादा मुक़द्दस और ताजमहल, कुतुबमीनार और एलोरा और अजन्ता की यादगारों से ज़्यादा मुल्क का क़ीमती असासा और क़ाबिले हिफ़ाज़त ख़ज़ाना समझा जाए। इनमें से किसी मफलूज मरीज़, नाकारा और जांबल्ब हस्ती की हिफ़ाज़त हज़ारों मुक़द्दस जानों, लाखों मुक़द्दस दरख़्तों और दर्जनों मुक़द्दस दरियाओं की ताज़ीम व हिफ़ाज़त से ज़्यादा ज़रूरी समझी जाती हों। और जब कभी इन दोनों में तरजीह व इन्तिख़ाब का सवाल पेश आए तो एक मुलहिद के लिए भी इस बारे में कोई तरद्दुद न हो कि इन्सान बिल उमूम और हिन्दुस्तान का शहरी बिलखुसूस इन सबसे ज़्यादा क़ीमती और क़ाबिले हिफ़ाज़त है। हुसूले आज़ादी के बाद फ़िरक़ावाराना फ़सादात का तख़ययुल जो अंग्रेज़ों ने अपनी सियासी व इन्तिज़ामी मस्लहतों से पैदा किया था, इस तरह हाफ़िज़ से महव और ज़िन्दगी से नापैद हो जाना चाहिए था, कि हमारे इन बच्चों और नवजवानों के लिए जिन्होंने 1947 के बाद होश संभाला है, उनका समझना ऐसा ही मुश्किल हो जाए जैसा कि तारीख़ के बईद अलक़यास वाक़यात का समझना मुश्किल होता है।

मज़हबी व फ़िरक़ावाराना बुनियाद पर किसी मुसलमान का क़त्ल, उसकी बेइज़्ज़ती और उस पर दस्तदराज़ी, एक ऐसा शर्मनाक और नाक़ाबिले बर्दाश्त जुर्म समझा जाए जिस पर हुकूमत की सारी मशीनरी हरकत में आ जाए और उसके नताएज इतने संगीन हों कि फिर किसी मुल्क दुश्मन और शरीरुन्नफ़्स को इस तजुर्बे की हिम्मत न पड़े, मुल्क की बड़ी से बड़ी ज़िम्मेदारी पर मुसलमान पर एतमाद किया जा सके, फ़ौज, पुलिस, और निज़ामे हुकूमत में उनको बड़ी से बड़ी क्लीदी जगहें हासिल हों, उनकी ज़बान, उनकी मज़हबी तालीम, उनका कल्चर और उनका पर्सनल लॉ, न सिर्फ़ महफ़ूज़ हो बल्कि मुल्क का एक क़ीमती सरमाया होने की हैसियत से उनकी नशोनुमा व तरक़्क़ी का पूरा–पूरा मौक़ा हासिल हो, किसी लम्हा भी यह ख़्याल उनके क़रीब न आने पाए कि ज़बान, कल्चर, पर्सनल लॉ और मज़हबी तालीम की आज़ादी के लिहाज़ से अंग्रेज़ी हुकूमत का तारीक व शर्मनाक ज़माना उनके लिए बेहतर और ग़नीमत था, किसी मुसलमान का बड़े से बड़े दिमाग़ी अदमे तवाज़ुन के मौक़े पर इस बात का तसव्वुर करना और गुलामी के ज़माने को याद करना हिन्दुस्तान की जम्हूरी हुकूमत की सबसे बड़ी नाकामी और जंगे आज़ादी के तक़द्दुस, उसकी आबरू और नामूस पर धब्बा तसव्वुर किया जाए और जंगे आज़ादी के सैंकड़ों मुख़लिस रहनुमाओं और लाखों बेलौस रज़ाकारों की रूह को अज़ीयत पहुंचाने के मुरादिफ़ समझा जाए और अगर इस मुल्क के किसी दूर–दराज़ के गोशे में भी कोई सितम रसीदा मुसलमान आज़ादी के अहद का गुलामी के इस दौर से तक़ाबुल करने लगे और अपने ज़हन के किसी मख़फ़ी गोशे में भी मज़हबी आज़ादी के लिहाज़ से इस दौर को तरजीह दे तो उसके लिए हिन्दुस्तानी रहनुमा गांधी जी की तरह गांधी जी की तरह व्रत रखना ज़रूरी समझें और हिन्दुस्तान के सबसे बड़े ज़िम्मेदार इन्सान का सर नदामत से झुक जाए, अगर हिन्दुस्तान के किसी कोने में किसी मुसलमान की नक्सीर भी फूट जाए तो इसकी तहक़ीक़ात और इसके असबाब को मालूम करने के लिए मरकज़ी हुकूमत से लेकर रियासती हुकूमत तक इसमें जुम्बिश और हरकत पैदा हो जाए।

हिन्दुस्तान में जो अफ़सोसनाक सूरतेहाल क़ायम है, इसका अख़लाक़ी, क़ानूनी, दस्तूरी, सियासी किसी सूरत से भी कोई जवाज़ नहीं। यह सूरतेहाल हिन्दुस्तान के लिए रुस्वाकुन, एतमाद और इत्तिहाद की फ़िज़ा के लिए संगे गरां और हमा जहती, तरक़्क़ी, ख़ुशहाली और इस्तिहकाम नेज़ बैनुल अक़वामी एतमाद के लिए सख़्त मुज़िर है, इसने मुल्क की बहुत सी नवखेज़ और पुरजोश सलाहियतों को तामीर के बजाए तख़रीब पर लगा दिया और मुल्क में शक व शुब्हा, बेएतमादी, रंज व आज़रदगी, शिकवा व शिकायत, ग़म व ग़ुस्सा की एक ऐसी फ़िज़ा पैदा कर दी है जिसका जद्दोजहद और तनाज़ा लिलबक़ा के उस अहद में कोई जवाज़ नहीं और हिन्दुस्तान के जैसे अज़ीम मुल्क के लिए जो निहायत नाज़ुक जुग़राफ़ियाई और सियासी नुक़्ता पर वाक़ेअ है कोई गुंजाइश नहीं। दूसरी तरफ़ पांच–छः करोड़ की अज़ीम अक़्लियत जो हिन्दुस्तान की तामीर व तरक़्क़ी के काम में निहायत अहम और फ़ैसलाकुन किरदार अदा कर सकती थी, वह अपनी जान व माल , इज़्ज़त व नामूस, ज़बान, कल्चर और तालीम के अदमे तहफ़्फ़ुज़ के एहसास से ग़ैर मुतमईन, ख़ाएफ़ और मलूल है और इसका असर उसकी पूरी ज़िन्दगी, उसके वलवला कार, नशात तबियत, कूव्वते अमल और उमंगो और तवानाइयों पर पड़ रहा है, वह रोज़ बरोज़ अफ़सुरदा, मायूस और अपने मुस्तक़िबल की तरफ़ से ग़ैर मुतमईन होती जा रही है।

हज़रत मूसा व ख़िज़्र (अलैहिस्सलाम) का क़िस्सा

हज़रत मौलाना सैय्यद मुहम्मद राबे हसनी नदवी

सूरह कहफ़ में ज़िक्र है कि अल्लाह तआला ने हज़रत मूसा (अलैहिस्सलाम) को हज़रत खिज़र से मिलने का हुक्म दिया, जिनके पास उनसे ज़्यादा इल्म था। चुनान्चे सफ़र पर रवानगी से क़िब्ल हज़रत मूसा (अलैहिस्सलाम) ने अपने नवजवान साथी से कहा कि मैं उस वक़्त तक मुसलसल चलता रहूंगा ख़्वाह एक दराज़ मुद्दत तक ही क्यों न चलना पड़े, जब तक मजमउल बहरैन यानि दो समन्दरों के मिलने की जगह पर न पहुंच जाऊं। यही वह जगह थी जहां हज़रत ख़िज़र से मुलाक़ात होना थी। मजमउल बहरैन के मुताल्लिक़ मुफ़स्सिरीन की मुख़्तलिफ़ राय हैं। कोई कहता है कि वह दरिया–ए–सीना और अफ़्रीक़ा का दरिया जहां दजला और फ़रात मिलते हैं, वह जगह मुराद है, कोई कहता है कि यह जगह दरिया–ए–दजला और फ़रात के पास है, ग़रज़ कि मुख़्तलिफ़ अंदाज़े हैं, लेकिन अल्लाह तआला ने इसकी ज़रूरत नहीं समझी कि इसको मुतअय्यन तौर पर बयान किया जाए, इसलिए कि इस वाक़्ये से इसका कोई अहम ताल्लुक़ नहीं है।

हज़रत मूसा (अलैहिस्सलाम) और उनके साथी जब मजमउल बहरैन पर पहुंचे तो अपनी मछली भूल गए और मछली ने समन्दर में अपना रास्ता अख़्तियार कर लिया। वह समन्दर में इस तरह चली गयी जिस तरह मछलियां पानी में बहती हैं। हालांकि इस मछली पर मसाला लगा हुआ था और वह खाने के क़ाबिल थी। लेकिन वह ज़िन्दा हुई और उसमें जान पैदा हो गयी और वह फिर पानी में चली गयी। बिलाशुब्हा यह एक ताज्जुबख़ेज़ वाक़्या हुआ और एक मोजज़े की बात पेश आयी। अल्लाह ने इसी चीज़ को उन दोनों हज़रात के मिलने की एक अलामत बनाया था। इसीलिए जब वह लोग मजमउल बहरैन से आगे बढ़ गए तो एक मंज़िल पर पहुंच कर हज़रत मूसा (अलैहिस्सलाम) ने अपने सफ़र के साथी से कहाः हमें सफ़र में बहुत थकन हो गयी है, हमें हमारा खाना लाओ, जब हज़रत मूसा ने खाना मांगा तो उस नवजवान को याद आया और उसने कहा कि आप खाने के लिये जो मछली मांग रहे हैं वह तो ज़िन्दा होकर समन्दर में चली गयी थी और अचानक अजीब तरीक़े से उछलकर समन्दर में कूद गयी थी, मगर मुझे शैतान ने कुछ ऐसा मशग़ूल कर दिया कि आपको यह बात बताना ही भूल गया।

हज़रत मूसा (अलैहिस्सलाम) के साथी ने भूलने की ग़लती को शैतान की तरफ़ मंसूब किया, जिससे यह सवाल पैदा होता है कि क्या शैतान किसी को कोई बात भुलाने पर क़ादिर है? कुरआन मजीद में शैतान का कई जगह तज़किरा आया है, जिससे पता चलता है कि शैतान भुला सकता है और मुसीबत में डाल सकता है, जैसेः (और अगर शैतान आपको भुला ही दे तो याद आने के बाद फिर ज़ालिम लोगों के पास मत बैठें) (सूरह यूसुफ़ः 42)

(और जिसके बारे में यूसुफ़ का ख़्याल था कि वह उन दोनों में बच रहेगा इससे उन्होंने कहा अपने आक़ा के सामने मेरा तज़किरा करना बस शैतान ने उसको भुला दिया कि वह अपने आक़ा से ज़िक्र करे)

(सूरह यूसुफ़ः 42)

(और हमारे बन्दे अय्यूब को भी याद कीजिए जब उन्होंने अपने रब को पुकारा कि मुझे तो शैतान ने अज़ीयत और जंजाल में डाल रखा है)

(सूरह स्वादः 41)

इसकी तश्रीह की जाती है कि हर बुरी चीज़ की निस्बत शैतान की तरफ़ होती है, दरअस्ल अल्लाह तआला ने शैतान को ऐसा बनाया है कि वह हवा की तरह है, वह छोटा भी हो सकता है और बड़ा भी, वह इन्सान के जिस्म में सरायत कर जाता है और दिल व दिमाग़ में भी चला जाता है, अल्लाह तआला ने उसकी साख़्त ऐसी रखी है कि वह दिमाग़ में भी घुस सकता

है, इसीलिए वह आदमी के ख़्यालात में शरीक हो जाता है और इस तरह वह आदमी के ख़्याल को भुला देता है। गोया वह आदमी के ज़हन को इस तौर पर मुतास्सिर कर देता है कि आदमी को पता ही नहीं चलता कि शैतान ने हमारा ज़हन भी मुतास्सिर किया है और वह ज़हन को इस तौर पर मुतास्सिर करता है कि बाज़ मर्तबा किसी ख़्वाहिश को बढ़ा देगा, या किसी तक़ाज़े को बढ़ाने का मशविरा देगा, लेकिन शैतान का यह मशविरा ऐसा होता है कि इन्सान उसे आंखो से नहीं देख सकता और न ही यह महसूस कर सकता है कि कोई बाहर की ताक़त हमको मुतवज्जा कर रही है। ठीक इसी तरह नेक बन्दों के साथ अल्लाह तआला का यह मामला होता है कि वह फ़रिश्तों के ज़रिये अच्छे कामों का ख़्याल दिल में डाल देता है।

हज़रत मूसा (अलैहिस्सलाम) को जब पता चला कि मछली निकल चुकी है, तो कहाः हम तो यही जानना चाहते थे कि मछली समन्दर में कब गयी, इसलिए कि वही हमारी मंज़िल थी, इसीलिए फिर दोनों लोग अपने निशाने क़दम तलाश करते हुए पीछे की तरफ़ वापस हुए और उसी रास्ते पर लौटे जिससे गए थे।

अल्लाह का इरशाद है कि जब मूसा (अलैहिस्सलाम) तय जगह पर पहुंचे तो वहां उन्होंने हमारे एक बन्दे को पाया, जिसको हमने अपनी तरफ़ से ख़ास तौर पर रहम का जज़्बा अता किया था और हमने उसे ख़ास इल्म सिखा दिया था। यहां पर दो बातें बयान हुईं। एक तो यह कि अल्लाह तआला ने उनकी तबियत ऐसी बनायी थी जो रहमदिल तबियत थी, जहां उन्होंने देखा कि किसी को तकलीफ़ है तो उसको आराम पहुंचाने की कोशिश करना, अगर किसी को कोई ज़रूरत है तो वह ज़रूरत पूरी करना। यूं भी अल्लाह तआला ने हर इन्सान के अन्दर यह तबियत बनाई है कि उसमें रहम का जज़्बा होता है। वह तरस खाता है और हमदर्दी करता है, लेकिन हज़रत ख़िज़र को रहमदिली का जज़्बा ख़ास तौर पर इनायत किया था और उसके साथ दूसरी चीज़ जो उनको अता की थी वह ख़ास इल्म था, जिसके ज़रिये वह उन हालात से बाख़बर हो जाते थे जो दूसरे लोग देख नहीं सकते, इसीलिए वह हालात देखकर समझ जाते थे कि किसी जगह मदद की ज़रूरत है और किस जगह हमदर्दी की ज़रूरत है। लिहाज़ा जब भी ऐसी कोई चीज़ उनके इल्म में आती थी तो वह फ़ौरन उसको अंजाम देते थे, अल्लाह तआला ने उन्हें इसकी ख़ास सलाहियत दी थी, उनके बारे में बाज़ लोग कहते हैं कि वह नबी थे और बाज़ कहते हैं कि वह नबी नहीं थे, बल्कि अल्लाह के ख़ास बन्दे थे, गोया उन्हें नुबूव्वत जैसा मक़ाम हासिल था और वह अपनी मख़सूस सलाहियतों की बुनियाद पर अपने आस–पास जो कुछ पेश आने वाला होता था, उसको महसूस कर लेते थे कि उसमें क्या नतीजा होगा?

हज़रत मूसा (अलैहिस्सलाम) ने हज़रत ख़िज़र से मिलकर दरख़्वास्त की कि हम आपसे कुछ चीज़ें सीखना चाहते हैं और अल्लाह तआला ने आपको "रश्द" यानि समझ की जो बातें सिखाईं हैं, वह बातें हम भी सीखना चाहते हैं, हज़रत ख़िज़र ने कहाः तुम हमारा साथ बर्दाश्त नहीं कर सकते हो, इसलिए कि वह जानते थे कि मूसा (अलैहिस्सलाम) का ज़हन दूसरा है और उनका काम भी दूसरा है, जबकि उन (ख़िज़र) का काम बिल्कुल अलग है। इसीलिए उनको हर काम में ताज्जुब होगा और यह परेशान होंगे कि ऐसा काम क्यों हो रहा है? इसलिए हज़रत ख़िज़र ने कहा कि तुम हमारे साथ बर्दाश्त से काम नहीं ले सकते हो, हम ऐसे काम करेंगे जिनसे आप वाक़िफ़ नहीं हैं और आपको पता नहीं है कि उनमें क्या मस्लहत पोशीदा है, लिहाज़ा आपको बहुत ताज्जुब होगा और आप हर चीज़ पर हमें टोकेंगे, इसलिए हमारा साथ मुश्किल होगा, लेकिन हज़रत मूसा (अलैहिस्सलाम) ने बाइसरार कहा कि अल्लाह की ज़ात से उम्मीद है कि हम बर्दाश्त से काम लेंगे और आपकी ख़िलाफ़वर्ज़ी नहीं करेंगे। हज़रत मूसा (अलैहिस्सलाम) के इस जवाब पर हज़रत ख़िज़र ने कहाः ठीक है, अगर आप मेरे साथ चलना चाहते हैं तो हम जो काम करेंगे, आप उसके मुताल्लिक़ हमसे कोई सवाल नहीं करेंगे, यहां तक कि हम ख़ुद ही आपको उन कामों की हक़ीक़त बयान न कर दें, लिहाज़ा बहुत बर्दाश्त से काम लेना होगा फिर जब दोनों आपस में रज़ामन्द हो गए तो सफ़र के लिए रवाना हुए और उसके बाद तीन अजीब व ग़रीब वाक़्यात पेश आए। (जारी)

इस्लाम के ग़ल्बे की कोशिशें

मौलाना ख़ालिद सैफ़ुल्लाह रहमानी

कुरआन का बयान है कि अल्लाह ने इस्लाम का यह मक़ाम रखा है कि वह दूसरे तमाम अफ़कार व मज़ाहिब पर ग़ालिब रहे, इस्लाम की मुख़ालिफ़ ताक़तें इस्लाम के रुख़े रोशन पर कितना भी गुबार डालना चाहें, अल्लाह इस्लाम की रोशनी को मुकम्मल कर के रहेंगे। यह यक़ीनन अल्लाह का नोश्ता है जो माज़ी में भी पूरा होता रहा और मुस्तक़बिल में भी इंशाअल्लाह पूरा होता रहेगा। लेकिन किसी चीज़ के ग़ालिब आने के लिए दो चीज़ों की ज़रूरत होती है, एक अंदरूनी ताक़त, दूसरे वह हथियार जिसको वह इस्तेमाल करता है, सवाल यह है कि वह ताक़त क्या है जो इस्लाम को ग़ल्बा अता करती है और वह हथियार क्या है जिसको इस्लाम के ग़ल्बे के लिए इस्तेमाल किया जाना चाहिए?

अगर कुरआन मजीद का मुताला किया जाए तो इस्लाम की सबसे बड़ी ताक़त उसकी फ़ितरत और अक़्ल से हम आहंग तालीमात हैं, जिनको कुरआन मजीद में ''आयाते बय्यनात'' यानि खुली हुई दलीलों से ताबीर किया गया है, इस्लाम के बुनियादी अफ़कार निहायत साइंटिफ़िक और मन्तिक़ी हैं, जैसेः तौहीद और आख़िरत के तसव्वुर ही को ले लीजिए, वह ऐसे ख़ुदाए वाहिद की तरफ़ इन्सानियत को बुलाता है जो बेहद ताक़तवर, मेहरबान और बाख़बर है। वह उन बुतों की परस्तिश से मना करता है जिनको इन्सान अपने हाथों से बना लेता है और बहुत सी दफ़ा अपने हाथों से पानी में भी डाल देता है। ऐसी ख़ुद से बनाई हुई चीज़ों को ख़ुदा कहना ख़ुद अपने बेटे को बाप और अपने गुलाम को मालिक कहने के बराबर है। इसीलिए तौहीद का अक़ीदा सौ फ़ीसद अक़्ल के मुताबिक़ है। इसी तरह इन्सानी फ़ितरत तक़ाज़ा करती है कि इन्सान को अच्छे और बुरे अमल का बदला मिले। इसीलिए ज़माना क़दीम से हर मुहज़्ज़ब समाज में अदालती निज़ाम क़ायम रहा है। कुरआन ने इस सिलसिले में आख़िरत का तसव्वुर पेश किया है। यह तसव्वुर पूरी तरह फ़ितरते इन्सानी के मुताबिक़ है, इसके अलावा यह अक़ीदा इन्सान को उस वक़्त भी ज़ुल्म से बचाता है, जब कोई देखने वाली आंख और टोकने वाली ज़बान मौजूद नहीं होती। ग़रज़ की अक़ीदा व ईमान का मसला हो या इबादात का, मुआशरती ज़िन्दगी के क़वानीन हों या मआशी निज़ाम से मुताल्लिक़ उसूल, या बैन मुल्की व बैन क़ौमी ताल्लुक़ात, हर जगह इस्लामी तालीमात अद्ल व एतदाल पर मुब्नी, इन्सानी फ़ितरत से हमआहंग और समाजी मस्लहतों से मुताबिक़त रखने वाली हैं। इस्लाम की सबसे बड़ी ताक़त यही है। इसीलिए रसूलुल्लाह (स0अ0व0) के ज़माने में कुफ़्फ़ार व मुश्रिकीन उस दौर के और इस दौर के यहूद व नसारा या दूसरी इस्लाम दुश्मन ताक़तों को भी यह हिम्मत नहीं पड़ी कि वह अपने मज़हब और क़ौमी अफ़कार का मुक़ाबला इस्लामी तालीमात से करें, बल्कि उन्होंने हमेशा हारे हुए दुश्मनों की तरह प्रोपगन्डे से काम लिया। अहदे नबवी (स0अ0व0) में दुश्मनाने इस्लाम पैग़म्बरे इस्लाम (स0अ0व0) के जादूगर और शायर होने का प्रोपगन्डा किया करते थे। सलीबी जंगों के दरमियान ईसाईयों ने यहां तक प्रोपगन्डा किया कि काबातुल्लाह में एक बुत है और रसूलुल्लाह (स0अ0व0) उसी की परस्तिश करते हैं। सलीबी जंगों के बाद चूंकि इस तरह के प्रोपगन्डे ख़ुद ईसाई अवाम के नज़दीक मज़हका खेज़ और नाक़ाबिले क़ुबूल हुए। इसलिए मुस्तशरिक़ीन ने कुछ नई इफ़्तरा परदाज़ियां की और मौजूदा दौर में बिला दलीले इस्लाम के शिद्दत पसंद और दहशतगर्द होने का प्रोपगन्डा किया

जा रहा है और सूरतेहाल यह है कि आलमे इस्लाम की बुज़दिली, कम हौसलगी, हवसे इक़्तिदार, ग़ैरते दीनी और हमीयते मिल्ली से महरूमी की वजह से मग़्रिब इस मुक़द्दमें में मुद्दई भी है और मुन्सिफ़ भी, लेकिन इसमें कोई शुब्हा नहीं कि इस्लाम की अन्दरूनी ताक़त जो कल थी वही आज भी है, मुसलमानों की अपने दीन की तरफ़ रग़बत और मुख़्तलिफ़ मुल्कों में क़ुबूले इस्लाम की तरफ़ रुझान यह उसी ताक़त का असर है, वरना तो मीडिया ने इस्लाम को इस दर्जे बदनाम कर रखा है कि कोई शख़्स पलट कर भी इस्लाम और मुसलमानों की तरफ़ नहीं देखता!

दूसरा सवाल यह है कि वह कौन सा हथियार है जो ग़ल्बा–ए–इस्लाम के ख़्वाब को शर्मिन्दा–ए–ताबीर कर सकता है? आज का दौर सुबह व शाम हथियारों की तैयारी का दौर है। ऐसे आतिशी हथियार तैयार हो चुके हैं कि लम्हा भर में एक शहर तो क्या एक मुल्क को जलाकर ख़ाक में मिला दे। पानी को थामे हुए किसी डैम पर एक बम गिरा दिया जाए और पूरा–पूरा शहर तूफ़ाने नूह की तरह पानी में डूब जाए। ऐसे कीमियाई हथियारों से अस्लहे का गोदाम भरा हुआ है कि लम्हा भर में आबादी की आबादी छलनी हो जाए और शहर का शहर ज़िन्दा लाशों का क़ब्रिस्तान बन जाए। आज मश्रिक़ से मग़्रिब इन ख़ूनी हथियारों की नुमाइश हो रही है और न जाने कब तक इन्सान की जानों का यह खेल खेला जाता रहेगा। लेकिन इस्लाम को कभी ऐसे हथियारों से ग़ल्बा हासिल नहीं हुआ। जब मक्का के आसमान से ईमान का सूरज निकला, उसकी रोशनी का सरचश्मा सिर्फ़ एक हस्ती थी, पैग़म्बर–ए–इस्लाम जनाब मुहमदुर्रसूलुल्लाह (स0अ0व0) की हस्ती, फिर उस क़ाफ़िले में कुछ ख़ुश नसीब शामिल होते गए, लेकिन हिजरत तक यह एक निहायत अक़्लियत थी। फिर मदनी ज़िन्दगी के इब्तिदाई पांच साल इस तरह गुज़रे कि बाज़ सहाबा जब सोते थे तो अपने बिस्तर में तलवार रखकर सोते थे कि मुबादा दुश्मन हमलावर हो जाएं। कुरआन मजीद ने मुसलमानों की सूरतेहाल का यह नक़्शा खींचा है कि वह ख़ौफ़ ज़दह रहते थे कि कहीं उन्हें उचक न लिया जाए। इसलिए यह हक़ीक़त है कि इस्लाम को कहीं भी अपनी सरबुलन्दी और ग़ल्बा व ज़हूर के लिए हलाकत खेज़ हथियारों की ज़रूरत नहीं पड़ी। दुनिया के जिस ख़ित्ते में मुसलमान पहुंचे कमो बेश उनकी यही सूरतेहाल रही, वह एक मुख़्तसर से क़ाफ़िले की सूरत में पहुंचे और देखते–देखते वह उस मुल्क पर रहमत के बादल बनकर छा गए।

यह कौन सा हथियार था और इसको किस कारख़ाने में डाला गया था? यह हथियार दावत–ए–दीन का था, जिसे हुस्ने अख़लाक़ से सैक़ल किया जाता था, यह हथियार ज़मीनों को नहीं दिलों को फ़तह करता था, यह मुल्कों का नहीं दिमाग़ों का ख़रीददार था। इसका तख़्ते इक़्तिदार ख़ाक़ व संग की ज़मीन से पहले क़ल्ब व नज़र की ज़मीन पर बिछा करता था, मर्दों और औरतों को क़ैदी नहीं बनाता था, बल्कि मुहब्बत का सौदागर था और दिल व निगाह को अपना असीर बना लेता था। उसी हथियार से इस्लाम ने जज़ीरतुल अरब को फ़तह किया था, हिजरत के आठवें साल जब रसूलुल्लाह (स0अ0व0) मक्का में दाख़िल हुए तो रसूलुल्लाह (स0अ0व0) के साथ सिर्फ़ दस हज़ार जांनिसार थे, मक्का को ख़ून बहाकर फ़तेह नहीं किया गया, बल्कि मुहब्बत की सौग़ात बांटकर जीता गया, किसी को इस्लाम लाने पर मजबूर किया गया, लेकिन पैग़म्बर–ए–इस्लाम (स0अ0व0) के उफ़ु व दरगुज़र और इन्सानियत नवाज़ी से मुतास्सिर होकर क़रीब–क़रीब पूरा मक्का मुसलमान हो गया। उसके बाद मुसलमानों ने यकसू होकर दावते इस्लाम की तरफ़ तवज्जो की और सिर्फ़ दो साल के बाद जब हज्जतुल विदाअ के मौक़े पर रसूलुल्लाह (स0अ0व0) मक्का मुकर्रमा तशरीफ़ लाए तो तक़रीबन सवा लाख साथी आप (स0अ0व0) के साथ थे। इसी तरह इस्लाम की रोशनी मश्रिक़ में मग़्रिब में फैलती गयी, घटाएं छटती गयीं और ज़ुल्मत और कुफ़्र की दबीज़ चादर इस्लाम के रुख़े रोशन के सामने तार–तार हो गयी, यह सबकुछ इस तरह हुआ कि न इस्लाम के पीछे तलवार थी, न तोप व तुफ़ंग, न जंगी जहाज़ थे, न बम और मीज़ाइल थे, यह सिर्फ़ दावते दीन का हथियार

था, जिसने दुश्मनों के हमलों को नहीं, जिस्मों को नहीं दिलों को जीत लिया।

रसूलुल्लाह (स0अ0व0) की ज़बाने मुबारक से कहलाया गया कि मेरा और मेरे पैरोकारों का अस्ल हथियार दावत है, मेरा तरीक़ा यही है कि अल्लाह के बन्दों को उसके मालिक की तरफ़ और कुफ़्र की तारीकी से ईमान की रोशनी की तरफ़ बुलाएं और मेरी यह दावत पूरे शऊर, गहरे फ़हम और इल्मी बसीरत पर मुब्नी हो। रसूलुल्लाह (स0अ0व0) को मक्की ज़िन्दगी में मुख़ालिफ़ीने इस्लाम से मुक़ाबले का यही गुर बताया गया कि आप हिकमत और दर्दमन्दाना नसीहत के साथ ख़ुदा ना आशना लोगों को अपने परवरदिगार की तरफ़ बुलाएं और उनसे बातचीत भी करें और इस बातचीत में सिर्फ़ बेहतर तरीक़े का इस्तेमाल काफ़ी नहीं, बल्कि सबसे बेहतर और ख़ूब तरीक़ेकार को बरतें।

इसके ख़िलाफ़ अगर उम्मत दावत के काम को छोड़ दे चाहे वह बज़ाहिर कितने ही मज़लूम हों, वह पैग़ामे हक़ को न पहुंचाकर इन्सानियत के साथ ज़ुल्म का इरतिकाब करने वाली है। उम्मत और कुरआन मजीद ने वाज़ेह ऐलान कर दिया है कि ज़ालिमों को कामयाबी हासिल नहीं हो सकती। कुरआन मजीद ने साफ़ तौर पर कह दिया है कि इस उम्मत को भेजा ही गया है और इसको बेहतरीन उम्मत के नाम से नवाज़ा ही गया है, इसलिए कि वह भलाई का हुक्म दे और बुराई से रोके। यह इस उम्मत को बरपा करने का मक़सूद है। बात ख़ुदाई मन्सूबा का हिस्सा है कि जो काम पिछले पैग़म्बरों से लिया गया है, वही काम इस उम्मत से लिया जाए। अब अगर कोई चीज़ अपने अस्ल मक़सद के लिए कारगर न रहे तो वह क्या बाक़ी रहने और इज़्ज़त पाने की मुस्तहिक़ है? इन्सानों को मां–बाप, बाल–बच्चे, शौहर और बीवी से कितना प्यार होता है, लेकिन जब वह मौत के मुंह में चले जाते हैं तो कोई उन्हें घर में नहीं रखता है, उसकी जगह कब्रिस्तान होता है। बल्ब और ट्यूब लाइट को इन्सान अपनी दीवार की ज़ीनत बनाता है और अपने सरों पर रखता है। लेकिन अगर यह ख़राब हो जाएं और रोशनी देना छोड़ दें तो फिर इसकी जगह डस्टबिन होती है। मिल्लते इस्लामिया की सूरते हाल इस वक़्त यही है। ऐसा लगता है कि कुदरत ने इसको डस्टबिन में डाल दिया है। जिनका काम और जिनका नाम आलमे इस्लामी के आसमान पर इज़्ज़त व सरबुलन्दी की अलामत समझा जाता था और जिनकी फ़तेह व कामयाबी का ग़ल्बा मश्रिक़ से मग़्रिब तक था, वह आज इस मक़ाम पर हैं कि शायद रुस्वाई और नामुरादी में कोई क़ौम उनकी हमसर न हो।

हिन्दुस्तान के मौजूदा हालात हमारे लिए ताज़ियाना–ए–इबरत हैं। एक हज़ार साल तक मुसलमानों ने यहां इस तरह हुकूमत की कि कोई ताक़त उनको चैलेंज करने की हिम्मत नहीं कर सकती थी, लेकिन उन्होनें यह पूरा वक़्त इक़्तिदार के महल को मज़बूत करने और बनाने संवारने में ख़र्च कर दिया और चंद मसाने रब्बानी और एक–दो नेकदिल बादशाहों के अलावा किसी ने इशाअते इस्लाम की तरफ़ तवज्जे नहीं दी। यहां तक कि उलमा की भी एक बड़ी तादाद मुनाज़िरा बाज़ियों और बाहमी आवेज़िशों के नशे में मस्त रही, फिर बर्तानवी इस्तअमार का एक कोड़ा कुदरत की तरफ़ से लगाया गया जो कम व बेश दो सौ साल हम पर मुसल्लत रहा। तक़रीबन इस दो सौ साल के अर्से में कुछ तो हालात के तक़ाज़े के तहत और कुछ तवील अर्से से बने बनाए मिज़ाज के तहत दावते इस्लाम की तरफ़ तवज्जे नहीं दी गयी। ग़ालिबन इससे सिर्फ़ सैय्यद अहमद शहीद के बाज़ ख़ुल्फ़ा का इस्तिस्नाअ है जिन्होंने बिरादराने वतन में तब्लीग़ की ख़िदमत अंजाम दी। अब मुल्क की आज़ादी को साठ साल से ज़्यादा का अर्सा गुज़र चुका है। ईसाई भाइयों ने इस वक़्फ़े में ईसाईयत की तब्लीग व इशाअत की मुहिम चलाई और इस अर्से में उन्होंने कई रियासतों के नक़्शे बदल कर रख दिये लेकिन आह और सद आह हमारी ग़फ़लत तोशी और ख़ुद फ़रामोशी की हम अब भी न हीं जागे। यहां तक कि फ़राएज़े दीन में दावते इस्लाम इसका ज़िक्र तक बाक़ी नहीं रहा जो मुसलमानों पर आयद होने वाला सबसे पहला फ़रीज़ा था और .... (शेष पेज 18 पर)

आम तौर पर समझा जाता है कि यूनिवर्सिटयां, कालिजेस और इल्म की मौजूदा गर्मबाज़ारी का नाम इल्म है। यह बात अपनी जगह दुरुस्त है। लेकिन इल्म के सिलसिले में एक बुनियादी फ़र्क़ समझना ज़रूरी है कि इल्म अगर माल के ताबए (अधीन) हो तो जिहालत है और माल अगर इल्म के ताबए हो तो इल्म है। अब कुरआन व हदीस का इल्म ऐसा है कि वह माल के ताबए हो ही नहीं सकता। अलबत्ता दुनियावी इल्म ऐसा है कि वह कभी माल के ताबए होता है और कभी ताबए नहीं होता है।

अफ़सोस की बात है कि बाज़ दीनदारों ने इल्मे दीन को भी माल के ताबए बना दिया है या बनाने की कोशिश में लगे हैं। यही वजह है कि इल्म की जिन बरकतों का मुज़ाहिरा होना चाहिए था, वह हमारी निगाहों से ओझल हो गया और बाक़ी सारी दुनिया ने इल्म को माल का ताबए बना दिया है।

इल्म को माल का ताबए बनाने का नतीजा यह हुआ कि इल्म इन्सानों के लिए वबाल हो गया और सारी इन्सानियत पर कलंक का टीका लग गया। अब हाल यह है कि जो शख़्स इल्म सीख रहा है व नफ़ा पहुंचाने के बजाए इन्सानियत को नुक़सान पहुंचा रहा है। कितने डॉक्टर ऐसे हैं जिनके पास इल्म है मगर उनका इल्म माल के ताबए है। इसलिए वह डॉक्टर के बजाए डाकू बने हुए हैं। वह अपने इल्म के ज़रिये किसी का गुर्दा निकालकर बेच रहे हैं और किसी की किडनी फ़रोख़्त कर रहे हैं। किसी के पास रॉकेट बनाने का इल्म है, मगर वह उसी की बुनियाद पर बेशुमार लोगों को हलाक कर रहा है और ज़हरीली गैस बनाकर इन्सानों को तबाह कर रहा है। ज़ाहिर बात है कि ऐसा इल्म हक़ीक़त में इल्म नहीं है बल्कि आख़िरी दर्जे की जिहालत है, जो लोग इस इल्म के ठेकेदार बने ख़ुद को साइंसदां और फ़लसफ़ी बताते हैं, हक़ीक़त में वह दुनिया के इतने बड़े जाहिल हैं कि शायद पूरी तारीख़े इन्सानी में इतने बड़े जाहिल कभी पैदा न हुए हों।

इल्म अगर माल के ताबए न हो तो उसकी क़द्र होती है और इन्सानों को नफ़ा पहुंचता है, जैसेः एक शख़्स इन्जीनियर इसलिए बनता है कि ताकि अगर आपके पास मकान के लिए थोड़ी सी जगह है तो इन्जीनियर अपना दिमाग़ लगाकर बता सके कि आप इस थोड़ी सी जगह में कैसे फ़ायदा उठा सकते हैं। वह इसलिए इन्जीनियर नहीं बना कि बड़े–बड़े नक़्शे हज़म कर जाए और पैसे पर पैसा कमाता रहे। पैसा तो इन्सान की ज़रूरत के लिए होता है और इन्सान का अस्ल काम नफ़ा पहुंचाना होता है। इसलिए इल्म माल से ऊपर होना चाहिए।

इल्मी हल्क़ों में यह बात मारूफ़ है कि जो चीज़ ज़रूरत की होती है, उसको ज़रूरत के बराबर लेना चाहिए, अब अगर कोई चीज़ ज़रूरत की है और ज़रूरत से ज़्यादा आ जाए तो फिर उसका अंजाम क्या होगा? जैसेः खाने–पीने और पहनने की चीज़ें ज़रूरत की हैं, ऐसे ही जितनी भी दूसरी ज़रूरत की चीज़ें हैं, अगर उन चीज़ों में तवाज़ुन अख़्तियार न करेंगे तो वह चीज़ वबाले जान बन जाएगी, ठीक इसी तरह माल भी एक ज़रूरत की चीज़ है, लिहाज़ा माल ज़रूरत के बराबर ही होना चाहिए, जितनी ज़रूरत पड़ती जाए उतना माल आपको मिलता जाए।

हमारे बुज़ुर्गों ने माल को हमेशा ताबए रखा, जितनी ज़रूरत होती थी वह उतना ही ले लेते थे या दूसरों के लिए छोड़ देते थे, लेकिन आजकल माल की हिस्र के सिलसिले में मामला बिल्कुल उल्टा हो चुका है, इसके नतीजे में हर काम बिल्कुल वबाल बना हुआ है।

ज़रूरत इस बात की है कि हम लोग अपना क़िब्ला दुरुस्त करें, फ़ीनफ़सिही कोई भी इल्म बुरा नहीं है, आदमी डॉक्टर, इंजीनियर, वकील जो चाहे बने, मगर उसके अन्दर इस्लामी जज़्बा होना चाहिए और उसका इल्म माल के ताबए नहीं होना चाहिए। अगर यह जज़्बा होगा तो उसका इल्म भी इन्सानियत के हक़ में नफ़ाबख़्श होगा, आजकल समाज में जितनी भी बुराइयां फैली हुई नज़र आ रही हैं, वह माल की हद से बढ़ी हुई मुहब्बत का ही नतीजा है। इल्म का मक़सद अगर माल हासिल करना हो तो जिहालत है, माल की हैसियत अगर पैर या पाज़ेब की हद तक है तो तरक़्क़ी का ज़ीना है और क़ूव्वत का पेश ख़ेमा है, लेकिन अगर इल्म की मसनद पर बिठा दिया जाए या यूं कहें कि पैर को सर पर रख दिया जाए तो आफ़त है और मौजूदा दौर इसकी जीती–जागती मिसाल है।

सच्चाई क्या है?

बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

मोमिन और झूठः

जब नबी–ए–अकरम (स0अ0व0) से यह पूछा गया कि क्या मोमिन झूठा भी हो सकता है? तो रसूलुल्लाह (स0अ0व0) ने इरशाद फ़रमायाः नहीं, मोमिन सबकुछ हो सकता है, मगर झूठा नहीं हो सकता है।

रसूलुल्लाह (स0अ0व0) ने यह ऐसा बात फ़रमायी जिससे अंदाज़ा होता है कि इस बात की किस क़द्र अहमियत है और इसका ईमान से किस क़द्र ताल्लुक़ है और यह चीज़ ऐसी है जो इस वक़्त तक़रीबन मुआशरे में ख़त्म होती चली जा रही है। लोग झूठ बोलना बहुत मामूली समझते हैं और इसको बाज़ मरतबा दीन दारी के मनाफ़ी नहीं समझते। अब तो अच्छे–अच्छे दीनदारों का हाल भी अजीब है।

अल्लाह मआफ़ करे एक साहब मदरसे की रसीद और तारुफ़नामा लेकर निकले, तारुफ़नामे में चार सौ लड़के लिखे हुए हैं और दस लाख ख़र्च दिया गया है, मगर सच यह पता चला कि मदरसे में लड़के सिर्फ़ दो सौ हैं और ख़र्च कुल छः लाख है। जिस शख़्स ने यह बात मुझे बतायी वह बेचारा तक़रीबन रोने लगा। वह बन्दा उसी मदरसे का चन्दा कर रहा था, जिसमें यह सब फ़र्ज़ी लिखा हुआ था। कहने लगा कि बड़े अफ़सोस की बात है कि जो लोग आलिम नहीं है, वह लोग रमज़ान के मुबारक महीने में मस्जिदों में तिलावत कर रहे हैं, अल्लाह के ज़िक्र में लगे हुए हैं और हम लोग झूठ बोलते फिर रहे हैं। हमने कहा, तुमने अपने मोहतमिम साहब से इस सरीह झूठ के बारे में कुछ क्यों नहीं कहा? तो उसने जवाब दिया कि मोहतमिम साहब ही ने कहा है कि दीन के मसले में झूठ बोलना जाएज़ है। हमने कहाः ''ला हौला वला कूव्वता इल्ला बिल्लाहि'' क्या दीन इतना सस्ता हो गया? अल्लाह का दीन तो बहुत ग़ैरतमंद है। दीन के मामले में झूठ बोलने की क्या ज़रूरत है। मदरसा खोलने की ज़रूरत ही क्या थी, जब मदरसा तुम्हारे बस में नहीं है। ऐसी सूरत में मदरसा छोड़ देना चाहिए, जिसमें झूठ बोलना पड़े, मदरसा खोलना बिल्कुल जाएज़ नहीं अगर आदमी झूठ बोल–बोल कर मदरसा चलाए।

ग़रज़ कि इस दौर में इस तरह के तमाशे हो रहे हैं और इसको दीन समझ लिया गया है। हालांकि रसूलुल्लाह (स0अ0व0) फ़रमाते हैं कि मोमिन सबकुछ हो सकता है, वह बुज़दिल हो सकता है, बख़ील हो सकता है, लेकिन वह झूठा नहीं हो सकता है।

दीने इस्लाम झूठी बात के बारे में बहुत हस्सास है। इसीलिए ज़बान की हिफ़ाज़त और उसको क़ाबू में रखने की हमेशा हिदायत की गयी है। यहां तक कि मज़ाक़ में भी झूठ बोलना सही नहीं बताया गया है। एक मौक़े पर रसूलुल्लाह (स0अ0व0) ने देखा कि एक ख़ातून अपने बच्चे को यह कह कर बुला रही हैं कि आओ बेटा, मैं तुमकों फ़लां चीज़ दूंगी। तो रसूलुल्लाह (स0अ0व0) ने उससे कहा कि क्या वाक़ई तुम वह चीज़ दोगी, उस औरत ने कहा हां। अल्लाह के रसूल (स0अ0व0) मैंने वह चीज़ देने के लिए रखी है। रसूलुल्लाह (स0अ0व0) ने फ़रमायाः अगर वह चीज़ तुम न देतीं तो अल्लाह के यहां यह भी एक झूठ लिखा जाता।

झूठ को आदमी समझता है कि छोटी–मोटी बातें सब चल सकती हैं। हालांकि अगर कोई मज़ाक़ में भी झूठ बोलता है तो बोलना ठीक नहीं है। हां यह हो सकता है कि इसमें थोड़ा सा इमाला हो यानि मज़ाक़ में कुछ बातें ऐसी की जांए जो झूठ न हों, मगर उनकी सच्चाई समझना मुश्किल हो। जैसे एक बुढ़िया रसूलुल्लाह (स0अ0व0) के पास आयी तो रसूलुल्लाह (स0अ0व0) ने फ़रमाया कि बूढ़ियां जन्नत में नहीं जांएगी, यह सुनकर वह रोने लगी कि हम जन्नत में नहीं जांएगे तो हमारा क्या होगा, तो रसूलुल्लाह (स0अ0व0) ने फ़रमायाा कि हां, कोई बूढ़ा जन्नत में नहीं जाएगा बल्कि अल्लाह तआला सबको जवान करके जन्नत में भेजेंगे, इसलिए तुम भी बूढ़ी होकर जन्नत में नहीं जाओगी, बल्कि जवान कर दिया जाएगा। इस मिसाल से समझा जा सकता है कि .... (शेष पेज 16 पर)

निकाह के शरई हैसियत फ़ज़ाएल चन्द एहकामात

मुफ्ती राशिद हुसैन नदवी

इस्लाम दीन–ए–फ़ितरत है, इसने फ़ितरी तक़ाज़ों के दबाने का कभी मुतालबा नहीं किया, अलबत्ता फ़ितरत पर चलने का सही रास्ता बताया। इन्सान को खाने–पीने की ज़रूरत है, उसको मना नहीं किया गया, अलबत्ता हलाल व हराम की तमीज़ सिखाई गयी, जिसमें सरासर खुद इन्सान का फ़ायदा है। ठीक इसी तरह इन्सान फ़ितरी तौर पर सिन्फ़े मुख़ालिफ़ की तरफ़ मैलान रखता है और उसे जिन्सी ख़्वाहिश पैदा होती है। इस्लाम ने इस फ़ितरी ख़्वाहिश को यकसर मिटाने और ख़त्म करने का मुतालिबा नहीं किया, बल्कि उस पर रोक लगायी, अलबत्ता इस फ़ितरी ख़्वाहिश को पूरा करने के कुछ उसलू बताए जिन पर अमल करना खुद इन्सान के लिए फ़ायदेमन्द है। यह भी बताया गया है कि सही उसूलों के मुताबिक़ यह ख़्वाहिश पूरी की जाए और अच्छी नियत से निकाह किया जाए तो वह इबादत का दर्जा हासिल कर लेता है और इससे सवाब मिलता है। इसीलिए निकाह के फ़ज़ाएल बयान किये गए, इसकी तरग़ीब दी गयी और बिलावजह इसको छोड़ देने वालों पर नकीर की गयी। निकाह में मशग़ूली को अम्बिया किराम (अलैहिस्सलाम) की सुन्नत और नवाफ़िल में मशगूली से अफ़ज़ल क़रार दिया गया, इस सिलसिले की चन्द आयात और अहादीस नीचे नक़ल की जाती हैः

बीवी से मुहब्बत अल्लाह तआला की निशानियों में से हैः

अल्लाह तआला का इरशाद हैः

"और यह भी उसकी निशानियों में से है कि उसने तुम्हारे लिए तुम्हीं में से जोड़े बनाए ताकि तुम उससे सुकून हासिल करो और तुम्हारे दरमियान आपस में मुहब्बत और मेहरबानी रख दी, यक़ीनन इसमें उन लोगों के लिए निशानियां हैं जो ग़ौर–फ़िक्र करते हैं।" (सूरह रूमः 21)

निकाह का हुक्मः

और निकाह का हुक्म देते हुए अल्लाह तआला का इरशाद हैः "तो जो औरतें तुमको पसंद आयीं उनमें से दो और तीन और चार तक से निकाह कर सकते हो और अगर तुम्हें डर हो कि तुम बराबरी न कर सकोगे तो एक ही पर या (बांदियों पर इक्तिफा करो) जो तुम्हारी मिल्कियत में हों, इसमें लगता है कि तुम नाइंसाफ़ी से बच जाओगे।" (सूरह निसाः 3)

और हदीसों में नबी करीम (स0अ0व0) ने भी मुख़्तलिफ़ मौक़ों पर निकाह की तरग़ीब दी और इसको अम्बिया किराम की सुन्नत क़रार दिया, चन्द अहादीस नीचे ज़िक्र की जाती हैंः

1. हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद (रज़ि0) से मरवी है फ़रमाते हैं कि हम नबी करीम (स0अ0व0) के साथ थे तो आपने फ़रमायाः ऐ नवजवानो! तुममें से जिसके पास निकाह करने का ख़र्च मौजूद हो उसे चाहिए कि शादी कर ले, इसलिए कि इससे बदनिगाही में कमी होती है और शर्मगाह की पाक दामनी पैदा हो जाती है और जिसको शादी की इस्तेताअत न हो वह रोज़ा रखे इसलिए कि वह शहवत को कम कर देता है।

(बुख़ारीः 5065, मुस्लिमः 1400)

2. हज़रत अबू अय्यूब अंसारी (रज़ि0) से मरवी है, फ़रमाते हैं कि नबी करीम (स0अ0व0) ने फ़रमायाः चार चीज़ें अम्बिया किराम की सुन्नतों में से हैंः हया, इत्र लगाना, मिस्वाक करना, निकाह करना। (तिरमिज़ीः 1080, मुसनद अहमदः 23581)

3. हज़रत अबू अय्यूब (रज़ि0) से मरवी है फ़रमाते हैंः नबी करीम (स0अ0व0) ने फ़रमायाः तीन लोगों की मदद को अल्लाह तआला ने अपने ऊपर लाज़िम कर लिया हैः अल्लाह के रास्ते में जिहाद करने वाला, वह मकातिब गुलाम जो अदा करने की नियत रखता हो और वह निकाह करने वाला जो पाकदामनी के इरादे से निकाह कर रहा हो। (तिरमिज़ीः 655, नसाईः 3218, इब्ने माजाः 2518)

4. हज़रत अनस बिन मालिक (रज़ि0) से मरवी है कि तीन हज़रात रसूलुल्लाह (स0अ0व0) की अज़वाजे मुतहरात के घर आए, नबी करीम (स0अ0व0) की इबादत में बारे में सवाल करने के लिए, जब उनको बताया गया तो गोया उन्होंने उन्हें कम समझा तो उन्होंने कहाः रसूलुल्लाह (स0अ0व0) से हमारा क्या मुक़ाबला जबकि आपके अगले–पिछले सारे गुनाह मआफ़ कर दिये गए हैं, तो एक ने कहाः मैं तो हमेशा रात भर नमाज़ें पढ़ूंगा, दूसरे ने कहाः मैं हमेशा रोज़ा रखूंगा, इफ़्तार करूंगा ही नहीं और तीसरे ने कहाः मै। औरतों से अलग रहूंगा और कभी शादी नहीं करूंगा, तो नबी करीम (स0अ0व0) आए और फ़रमायाः तुम ही लोगों ने ऐसा–ऐसा कहा है? सुनो! अल्लाह की क़सम! मैं तुमसे

ज़्यादा अल्लाह से डरने वाला और तक़्वा करने वाला हूं, लेकिन मैं रोज़ा रखता हूं, इफ़्तार भी करता हूं, नमाज़ पढ़ता हूं और सोता भी हूं और औरतों से शादी करता हूं, तो जो मेरे तरीक़े से रूगरदानी करे उसका मुझसे ताल्लुक़ नहीं है। (बुख़ारीः 5063, मुस्लिमः 1401)

5. हज़रत अब्दुल्लाह बिन अम्र (रज़ि0) से मरवी है कि रसूलुल्लाह (स0अ0व0) ने फ़रमायाः दुनिया (जल्द ख़तम होने वाली) मताअ है और दुनिया की मताअ (सामान) में सबसे बेहतर नेक बीवी है।

6. हज़रत अनस (रज़ि0) से मरवी है फ़रमाते हैंः रसूलुल्लाह (स0अ0व0) ने फ़रमायाः जब बन्दा शादी कर लेता है तो वह अपने निस्फ़ दीन को मुकम्मल कर लेता है, तो बाक़ी निस्फ़ के बारे में उसे अल्लाह से डरना चाहिए। (बैहिक़ी, मिश्कातः 2/168)

निकाह की शरई हैसियतः

इन्सान की हालत के ऐतबार से निकाह की शरई हैसियत में तब्दीली हो जाती है। इसीलिए इन्सान की मुख़्तलिफ़ हालतों के ऐतबार से उसकी पांच हैसियतें बयान की जा सकती हैंः

1– जो शख़्स मेहर व नान–नफ़्क़े की अदायगी पर क़ादिर हो, साथ ही उसे मुकम्मल इत्मिनान हो कि वह बीवी पर किसी तरह का ज़ुल्म नहीं करेगा और शहवत इतनी बढ़ी हुई हो कि निकाह के बग़ैर ज़िना से बचना मुमकिन न हो तो ऐसे शख़्स पर निकाह करना फ़र्ज़ है, इसलिए कि शरीअत का एक उसूल यह है कि जिस चीज़ को अख़्तियार किये बग़ैर हराम से बचना मुमकिन न हो उसको अख़्तियार करना फ़र्ज़ हो जाता है। (शामीः 2/282–283)

2– जो शख़्स नफ़्क़ा व मेहर वग़ैरह की अदायगी पर क़ादिर हो और उसे यह इत्मिनान भी हो कि वह बीवी पर किसी तरह का ज़ुल्म नहीं करेगा और उसे पहले शख़्स की तरह शादी न करने पर ज़िना में पड़ने का यक़ीन तो न हो लेकिन यह ख़तरा और अंदेशा हो कि अगर निकाह न किया तो ज़िना, बदनज़री या मुश्तज़नी वग़ैरह में पड़ जाएगा तो उस पर निकाह वाजिब हो जाता है। (शामीः 2/282)

3– जो शख़्स नार्मल हालत में हो यानि नान–नफ़्क़े पर क़ुदरत हो, बीवी के जुमला हुक़ूक़ अदा कर सकता हो, उस पर ज़ुल्म का ख़तरा भी न हो, साथ ही उसे अपने ऊपर क़ाबू हासिल है और वह समझता है कि निकाह न करने पर भी वह गुनाह में नहीं पड़ेगा, तो ऐसे शख़्स के लिए निकाह करना सुन्नत–ए–मुअक़्क़दा है। अगर यह शख़्स निकाह न करे तो तारिके सुन्नत होगा और गुनाहगारों में शुमार किया जाएगा। (शामीः 2/282)

4– अगर किसी शख़्स को अंदेशा हो कि निकाह करके वह नान–नफ़्क़ा अदा नहीं कर सकेगा, या हुक़ूके जौजियत अदा नहीं कर सकेगा, या अंदेशा है कि कहीं बीवी पर ज़ुल्म न कर बैठे तो ऐसे शख़्स के लिए निकाह करना मकरूह–ए–तहरीमी है। (शामीः 2/282)

5– और अगर इसको यक़ीन हो कि बीवी के माली या जिन्सी हुक़ूक़ अदा नहीं कर सकेगा तो उसके लिए निकाह करना हराम है, अगर करेगा तो हराम का इरतिकाब करने का गुनाह होगा। (शामीः 2/282)

अगर कोई ऐसा शख़्स हो जिसकी हालतों में टकराव हो जाए यानि एक तरफ़ उसकी शहवत इस तरह बढ़ी हुई है कि उसको ज़िना का अंदेशा या यक़ीन है, दूसरी तरफ़ यह भी है कि उसे बीवी के ऊपर ज़ुल्म या तअद्दी का अंदेशा या यक़ीन है तो ऐसी सूरत में उस पर निकाह फ़र्ज़ या वाजिब नहीं रहेगा, बल्कि निकाह करना मकरूह होगा, अपनी शहवत रोज़ा रखकर कम करे, हां अगर बीवी पर ज़ुल्म का अंदेशा नहीं है, लेकिन मेहर व नान–नफ़्क़े में कमज़ोरी है तो वह निकाह कर ले और नान–नफ़्क़ा की अदायगी के लिए क़र्ज़ ले ले, हदीस शरीफ़ में ऊपर ज़िक्र हुआ कि इंशाअल्लाह उसकी मदद अल्लाह तआला करेगा। (शामीः 2/282)

जिसके पास निकाह के असबाब न हो वह क्या करे?

अगर किसी शख़्स को निकाह का तक़ाज़ा हो लेकिन न तो उसे निकाह के असबाब हासिल हों न तो क़र्ज़ वग़ैहर के ज़रिये उन असबाब को हासिल कर सकता हो तो ऊपर हदीस में दी गयी हिदायत के मुताबिक़ उसे चाहिए कि मुसलसल रोज़े रखे, इससे इंशाअल्लाह नफ़्सानी तक़ाज़े में कमी वाक़ेअ हो जाएगी, बाद में अल्लाह असबाब मुहैया कर दे तो शादी कर ले।

पहले शादी करे या हज?

अगर किसी के ऊपर हज के मसारिफ़ होने की वजह से हज वाजिब हो जाए और उसे निकाह की भी हाजत हो तो अगर निकाह न करने से गुनाह में पड़ जाने का यक़ीन हो तो निकाह करेगा और अगर ऐसी कैफ़ियत न हो तो अगर हज का ज़माना बिल्कुल क़रीब हो तो हज करे और अगर हज के सफ़र में अभी देर हो तो वह हज से पहले निकाह कर सकता है। (शामीः 2/156)

मिल्लत-ए-इब्राहीमी और सुन्नत-ए-नबवी ﷺ

अब्दुस्सुब्हान नाख़ुदा नदवी

"वह कहते हैं कि यहूद या नसारा हो जाओ राह पर आ जाओगे, आप फ़रमा दीजिए बल्कि हम तो यकसू रहने वाले इब्राहीम की मिल्लत पर रहेंगे और वह तो शिर्क करने वालों में न थे।" (सूरह बक़रा: 135)

जो क़ौमें अपनी मंज़िल खोटी कर चुकी होती हैं, उनकी फ़ितरत में एक ख़ास क़िस्म की ज़िद पैदा होती है, उनकी ऐसी आला हौसलगी नहीं होती कि अपनी कमियों को ठीक करें, उल्टे जब सही बात उन तक पहुंचती है तो वह ज़िद में आकर अपने ग़लत कामों पर और जम जाते हैं, जाहिली जज़्बात इस तरह उभर आते हैं कि हक़ को जानकर अंजान बनना उनको अच्छा लगता है। यहूद व नसारा एक तवील मुद्दत तक दीनी ठेकेदार बने हुए थे, जब हक़ीक़तन दीने हक़ अपनी ताबानी के साथ नुमूदार हुआ तो उनसे बर्दाश्त न हो सका और यह जानने के बावजूद कि उनका दीन अब तहरीफ़ात का शिकार होकर अपनी शक्ल व सूरत खो चुका है, वह यहूदियत व नसरानियत की दावत देने लगे, यही मामला मुश्रिकीन–ए–मक्का का हुआ, उनकी जाहिली नुख़ूव्वत को यह गवारा न हो सका कि कोई उनके दीन को ग़लत ठहराए। ख़ुद अहले किताब में भी इख़्तिलाफ़ उस वक़्त उरूज पर नज़र आता जब वाज़ेह हक़ उन तक पहुंच जाता।

"अहले किताब का इख़्तिलाफ़ उसी वक़्त उभर कर सामने आता जब उनके पास वाज़ेह एहकामात आते।"

यह तो उनकी आपसी लड़ाइयां थी जो हर नबी की बेअसत के वक़्त उभर कर सामने आयीं। यहां मामले नबी आख़िरुज़्ज़मां का था, जिनके ज़रिये सारे दीन मन्सूख़ हो गए और एक सही दीन पूरी आब–ताब के साथ नुमूदार हुआ। बस अहले किताब के आग लग गयी। उन्होंने महज़ ज़िद में यह कहना शुरू किया कि अस्ल हिदायत तो हमारे पास है। यहूदी बन जाओ हिदायत पा जाओगे। नसारा तो हर दौर में यहूद के मुक़ल्लिद महज़ रहे हैं। उन्होंने भी यही राग बुलन्द किया कि अगर हिदायत कहीं हैं तो नसरानियत में है, जो निशाने मंज़िल गुम कर देते हैं, उनको सही निशान बताया जाए तो यही ज़िद पैदा होती है कि हमको बताने वाला कौन आ गया। यही मामला यहूद के साथ हुआ। उनकी नुख़ूव्वत को यह गवारा न हुआ कि हिदायत का इल्म रसूलुल्लाह (स0अ0व0) के हाथ में आए। रूसाए यहूद दिन–रात यह कहने लगे कि यहूदी बन जाओ, हिदायत याफ़्ता हो जाओगे, हालांकि रसूलुल्लाह (स0अ0व0) से पहले कभी भूले–भटके भी इनको दावत का ख़्याल तक न आता। यह महज़ ज़िद थी वरना वह ख़ूब जानते थे कि मामला उनके हाथ से निकल चुका है।

यह आयत रुसाए यहूद से मुताल्लिक़ नाज़िल हुई है जिनमें काब बिन अल अशरफ़, मालिक बिन अल सैफ़ वहब बिन यहूद और अबी यासिर बिन अन्तिब वग़ैरह शामिल हैं। अल्लाह के सच्चे पैग़ाम को इन लोगों ने मज़हबी लड़ाई बना दिया। शब व रोज़ यहूद की एक ही रट थी कि तौरेत सबसे अफ़ज़ल किताब है और हज़रत मूसा सबसे अफ़ज़ल नबी है। इनकी देखादेखी ईसाईयों ने भी अपने मज़हबे दीनी के बारे में यही बातें कहीं। यह एक साफ़ सच्ची दावत को ग़लत मज़हबी रंग देने की नादानिश्ता कोशिश थी। अल्लाह की तरफ़ से बात साफ़ कर दी गयी कि लग़वियात में अपनेआप को तबाह करने के बजाए मिल्लते इब्राहीमी का दामन थाम लो, जिसके सबसे बड़े और दायमी अलमबरदार हज़रत मुहम्मद (स0अ0व0) हैं। इसी मिल्लते इब्राहीमी पर बनी इस्माईल व बनी इस्राईल सबका इत्तेफ़ाक़ था। मूसा (अलैहिस्सलाम) अपने दौर में इसी पर क़ायम थे। ईसा मसीह का भी यही दीन था। मुहम्मद (स0अ0व0) कोई नई बात नहीं पेश कर रहे थे। तुम्हारी खोई हुई हक़ीक़त तुम्हें याद दिलाने के लिए मबऊस हुए हैं। उसे अगर तुम मज़हबी रंग देकर

झगड़ने की कोशिश करोगे तो यह उसकी दलील होगी कि तुम मिल्लते इब्राहीमी को पसंद करने वाले नहीं बल्कि अपनी नफ़्सानियत के गिरफ़्तार हो। यह बात भी ग़ौर करने के क़ाबिल है कि यहां रसूलुल्लाह (स0अ0व0) के नाम पर उनको बुलाया नहीं गया बल्कि मिल्लते इब्राहीम के हवाले से दावत दी गयी। यह दावत का हकीमाना अंदाज़ है। बात को इस सलीक़े से कहा जाए कि मुख़ातिब भले मुख़ालिफ़ हों वह भी कुछ सोचने पर मजबूर हो जाए। ज़ाहिर बात है कि यहां मिल्लते इब्राहीम से मुराद दीने मुहम्मद (स0अ0व0) के अलावा और क्या हो सकता है। रसूलुल्लाह (स0अ0व0) मिल्लते इब्राहीमी को सही तौर पर क़ायम करने और उसे आलमगीर पैमाने पर दुनिया के हर ख़ित्ते में पहुंचाने के लिए भेजे गए थे। फिर चूंकि रसूलुल्लाह (स0अ0व0) आख़िरी दायमी रसूल हैं, इसलिए आपके हवाले से इस दीन की पहचान हुई और आपकी सीरत व किरदार को हर्फ़े आख़िर क़रार दिया गया कि अब इसके बग़ैर कोई मुहब्बते खुदावन्दी के उसूल तक पहुंच ही नहीं सकता। वरना ग़ौर किया जाए तो मिल्लते इब्राहीम और सुन्नते नबवी एक ही सिक्के के दो रुख़ हैं। इसीलिए जा बजा रसूलुल्लाह (स0अ0व0) ने हज़रत इब्राहीम और अपनी ज़ाते मुबारक को एक–दूसरे से निहायत मुशाबेह क़रार दिया है।

हज़रत इब्राहीम (अलैहिस्सलाम) की शरीअत की ''हनफ़ियत'' कहते हैं। हज़रत इब्राहीम (अलैहिस्सलाम) की शरीअत की सच्ची पैरवी करने वाले को ''हनीफ़'' कहते हैं। हनफ़ ''माएल होने'' को कहते हैं। जो शख़्स तमाम ग़लत दीनों को छोड़कर सही दीन को पूरी यकसूई से अपना लेता है वह हनीफ़ है। हज़रत इब्राहीम (अलैहिस्सलाम) की एक इम्तियाज़ी सिफ़त हनीफ़ है। वह सबसे कट–कटाकर महज़ एक अल्लाह के हो गए थे, इसलिए आपकी शरीअत ही को मिल्लते हनीफ़िया कहा गया। यहां उसका हुक्म है कि मौजूदा यहूदियत, नस्रानियत और अरबों का दीन जो सरापा शिर्क बन चुका था, सब अपनी हक़ीक़त खो चुके, अब क्यों ने अपनी ज़िद छोड़कर इब्राहीम की शरीअत की पैरवी की जाए। इसी नुक़्ते पर सबका इत्तेफ़ाक़ हो सकता है। और क़ुरआने अज़ीम ने वही दीनी नुक़्ता–ए–इत्तिफ़ाक़ मिल्लते इब्राहीम के नाम पर पेश किया।

शेषः सच्चाई क्या है?

इसमें कुछ मज़ाक़ भी हो गया और बात भी सच रही। रसूलुल्लाह (स0अ0व0) से इस तरह का मज़ाक़ साबित है, जिसमें झूठ मिला हुआ न हो। मज़कूरा हदीस में रसूलुल्लाह (स0अ0व0) की बात बिल्कुल सही थी कि बूढ़े जन्नत में नहीं जांएगे बल्कि अल्लाह तआला उन्हें जवान करके जन्नत में दाख़िल करेंगे। तो इस तरह की अगर कोई शख़्स मज़ाक़ में बात करे तो इसमें कोई हर्ज की बात नहीं। लेकिन अगर कोई शख़्स मज़ाक़ में सरासर झूठ बोल रहा है तो इसकी इजाज़त नहीं है, इसलिए कि एक ईमान वाला कभी झूठ नहीं बोल सकता, वह जो कहता है सच कहता है।

आम बोल–चाल में सच्चाई का लिहाज़ः

हज़रत अब्दुल्लाह बिन आमिर (रज़ि0) से रिवायत है कि एक दिन मुझको मेरी वालिदा ने बुलाया, उस वक़्त रसूलुल्लाह (स0अ0व0) मेरे घर में तश्रीफ़ फ़रमा थे। वालिदा ने फ़रमाया आओ मैं तुम्हें दूं, तो रसूलुल्लाह (स0अ0व0) ने मेरी वालिदा से फ़रमाया कि तुमने क्या देने के लिए बुलाया था तो वालिदा ने फ़रमाया, मैंने एक खजूर देने के लिए बुलाया था। रसूलुल्लाह (स0अ0व0) ने फ़रमाया, अगर बुलाकर कुछ न देती तो यह झूठ में शुमार होता। (अबूदाऊद)

आम तौर से घरों में ऐसा होता है कि मांए अपने बच्चों से कहती हैं कि बेटा आओ हम तुम्हें टॉफ़ी देंगे, जबकि हाथ में टॉफ़ी नहीं होती है। या कहेंगी कि बेटा आओ, हम तुम्हें मिठाई देंगे, जबकि मिठाई कुछ भी नहीं होती, बल्कि माएं सिर्फ़ फुसलाने और बुलाने के लिए झूठ बोलती हैं। इस हदीस से मालूम हुआ कि यह भी एक झूठ और इसकी भी बिल्कुल इजाज़त नहीं है।

यानि अगर कोई इस तरह महज़ बहलाने–फुसलाने के लिए भी करेगा तो वह झूठ लिखा जाएगा।

आम तौर पर बहुत से लोगों में भी यह आदत होती है कि वह महज़ तफ़रीह के लिए लोगों के बीच कुछ भी झूठ बोल देते हैं, मसलन किसी ने बोल दिया कि किसी जगह पैसे बंट रहे हैं, जबकि ऐसा कुछ नहीं होता। इस हदीस से यह पता चला कि ऐसी तफ़रीह की शरअन बिल्कुल इजाज़त नहीं है, जिसमें सरासर झूठ बोला जाए। मज़ाक़ में भी सरीह झूठ की इजाज़त नहीं है, इसलिए कि झूठ बहरहाल झूठ है और ईमानवाला कभी झूठ नहीं बोलता।

ताक़त का नशा

मुहम्मद अरमुग़ान बदायूंनी नदवी

नशावर चीज़ें हर समाज में नापसंदीदा हैं। नशे का अंजाम निहायत मुहीब है और नशे का चस्का इन्तिहाई मुज़िर है। अश्याए ख़ुरदनी का नशा हड्डियां गलाता है, मोहलिक बीमारियां बनाता है, दिमाग़ को मफ़लूज करता है माद्दा को तबाह करना, ऐसाब को मुतास्सिर करता है। जिस्म में ज़हरीले माद्दे फैलाता है और बिलआख़िर घर–बार तबाह कर देता है। नशा ज़िन्दगी की ज़िद है। जिन्दगी परवाज़ चढ़ती है और नशा तनज़्ज़ुली। ज़िन्दगी हमसाए चाहती है और नशा बेगाने। ज़िन्दगी आबादी चाहती है और नशा बर्बादी। ज़िन्दगी इज़्ज़त चाहती है और नशा बेइज़्ज़ती। ज़िन्दगी आला मेयार चाहती है और नशा अदना मेयार। ज़िन्दगी बुलन्द अज़ाएम चाहती है और नशा फ़क़त एक कश।

दुनिया में नशे की मुख़्तलिफ़ अक़साम और मुतअद्दिद शक्लें हैं जिनमें नशे की एक क़िस्म ताक़त का नशा भी है। ताक़त का नशा दुनिया के सभी नशों से ज़्यादा ख़तरनाक, मोहलिक और तबाहकुन है। इसका फ़लसफ़ा सबसे अलग और मअज़रात निहायत संगीन और बहुत ही गहरे। ताक़त की फ़ी नफ़िसही शै–ए–महमूद है। ताहत नशा हर उस चीज़ का हराम है जो इन्सान के अन्दर से इन्सानियत का अन्सर ही छीन ले, ताक़त का वजूद ज़ुल्म मिटाता है, मगर ताक़त का नशा ज़ुल्म को बढ़ावा देता हैं ताक़त का वजूद बदउनवानी को ख़त्म करता है। मगर ताक़त का नशा बदउनवानी को बढ़ावा देता है। ताक़त का वजूद अमन का निफ़ाज़ करता है मगर ताक़त का नशा बदअमनी फैलाता है। ताक़त का वजूद तहफ़्फ़ुज़ात फ़राहम करता है मगर ताक़त का नशा तहफ़्फ़ुज़ात ख़त्म करता है। ताक़त का वजूद तरक्क़ी के ताने–बाने बुनता है मगर ताक़त का नशा तरक़्क़ी के सांचे ही तोड़–फ़ोड़ देता है। ताक़त का वजूद माहिरीने फ़न की दरियाफ़्त करता है मगर ताक़त का नशा चोर व डाकू को पैदा करता है। ताक़त का वजूद मुल्कों को मज़बूत करता है मगर ताक़त का नशा मुल्कों की बुनियादें हिला देता है। ताक़त का वजूद भेदभाव की सड़ांध को साफ़ करता है मगर ताक़त का नशा भेदभाव के जरासीम को परवान चढ़ता है। ताक़त का वजूद इन्सानों को हुक़ूक़ दिलाता है मगर ताक़त का नशा इन्सानों के हुक़ूक़ छीन लेता है।

ताक़त का नशा एक लाइलाज बीमारी है, जिसमें अफ़कार और इक़दार और मेयार बदल जाते हैं, ज़ेहन की सोच और सोचने का ढंग तब्दील हो जाता है, बसारत पर दबीज़ पर्दे हाएल और बसीरत से महरूमी हो जाती है, इन्सानी ज़मीर मुर्दा और हिस्से तलाफ़त बेजान हो जाती है।

ताक़त का नशा जब सर चढ़कर बोलता है तो ज़ुल्म को इन्साफ़, सितम को करम, गाली को मरहम और मुफ़लिसी को अमीरी समझा जाता है, फिर नवजवानों का मुस्तक़बिल स्याह होता है, उनकी ज़िन्दगी का इस्तहसाल और उनकी ताक़त का नाजाएज़ इस्तेमाल किया जाता है। बिलाशुब्हा ताक़त का नशा मुल्कों को तबाह कर देता है, नस्लों को बर्बाद कर देता है, तहज़ीबों को मस्ख़ और हुर्रियते राय का हक़ छीन लेता है।

ताक़त का नशा हुस्न व क़बह का फ़र्क़ ख़त्म कर देता है। अच्छे–भले की तमीज़ मिटा देता है। इसीलिए वह नाअहलों को ख़ूब नवाज़ता है। उनकी जुर्रतें बढ़ाता है। उन्हें मासूमियत के तमग़े देता है। आला मनासिब पर बिठाता है, जिनके ज़रिये अपने नापाक मंसूबे कामयाब बनाता है। नतीजा यह होता है कि यह नशा फ़िरऔनी साम्राज्य को फ़रोग़ देता है। बदउनवानी को हवा देता है। मईशत को अबतर करता है और क़ौमों को ताराज कर देता है।

ताक़त का नशा बहुत गहरा है और इसकी पॉलिसी भी हद दर्जे ज़हर से भरी हुई। जब सरेआम इस नशे की तूती बोलती है तो ज़िन्दगी का हर शोबा इसके क़दमों में ढेर हो जाता है। मीडिया इसका मुतीअ, मुहकमा–ए–अमन इसका नाज़ बरदार, मुहकमा–ए–तफ़्तीश इसके इशारा–ए–अबरू का पाबन्द, मुहमका–ए–इन्तिख़ाबात इसके किनायों का राज़दां और महकमा–ए–इन्साफ़ इसका रहीने मिन्नत हो जाता है।

ताक़त का नशा समाज के हर तबक़े पर असरअंदाज़ होता है। जिसके असरात लोगों के किरदार व गुफ़्तार में झलकते हैं। मुअल्लिमीन का तरीक़े तफ़हीम जुदा हो जाता है। अहले सियासत का लब व लहजा करख़्तगी अख़्तियार कर लेता है। तहरीक़ों का एजेण्डा बदल जाता है और इस नशे से मुतास्सिर आम आदमी का तर्ज़े सुख़न भी ज़हरआलूद हो जाता है।

ताक़त का नशा एक ग़ैर महदूद समाजी वबा है। अगर अहले दानिश इसका शिकार हो जाएं तो यह तारीख़ में तहरीफ़, निसाबे तालीम में ज़हरअफ़शानी और दफ़ातिर में रिश्वत सतानी को रवा कर देता है। और अगर अरबाबे हल व अक़्द इसके आदी हो जाएं तो यह मज़लूमों पर ज़ुल्म, मासूमों पर बरबरियत, निहत्थों पर डाका, शरीफ़ों से छेड़छाड़, सिन्फ़े नाज़ुक की बेइज़्ज़ती और जोयाने हक़ को क़त्ल की राह दिखाता है।

ताक़त का नशा मुतअद्दी और इसका नतीजा तख़रीब कारी है। यह नशा अख़लाक़ का दीवालिया कर देता है। क़ौमों की तक़दीर में गुलामी की लकीर खींच देता है। मुल्को की क़िस्मत में मआशी बोहरान चस्पा कर देता है। इन्सानी समाज में नफ़रत की ख़न्दकें खोद देता है और पसमान्दा तबक़ात की ज़िन्दगी से रोशन मुस्तक़बिल की इस्लाह ग़ायब कर देता है।

ताक़त का नशा जज़्बा–ए–तामीर के मनाफ़ी है। जज़्बा–ए–तामीर सालेह अफ़राद चाहता है और ताक़त का नशा फ़ासिद अफ़राद। जज़्बा–ए–तामीर उरुज चाहता है और ताक़त का नशा ज़वाल, जज़्बा–ए–तामीर अमन चाहता है और ताक़त का नशा ख़ौफ़ व हरास। जज़्बा–ए–तामीर तालीम याफ़्ता समाज चाहता है और ताक़त का नशा जिहालत!

शेषः रास्ते बन्द हैं सब दावत के रास्ते के सिवा

.... जो इसका मक़सद–ए–वजूद था।

मुसलमान इस मुल्क में जिस सूरतेहाल से दोचार हैं, इसका मुस्तक़िल, मोअस्सिर और देरपा हल यही है कि जैसे सियासतदां इलेक्शन के मौसम में इलेक्शन को ओढ़ना–बिछौना बना लेते हैं, इसी तरह मुसलमान इसको अपने लिए ओढ़ना–बिछौना बना लें। अपने ग़ैरमुस्लिम पड़ोसियों से बातें कीजिए, मुसलमान डॉक्टर मरीज़ों को अल्लाह के दीन की तरफ़ बुलाए, ताजिर है तो वह ग्राहकों को दीने हक़ से रोशनास कराए, मुआलिज है तो मरीज़ों को अल्लाह के दीन की तरफ़ बुलाए, अफ़सर हो तो अपने मुलाज़िमीन के सामने इस्लाम की हक़ीक़त को वाज़ेह करे, किसी भी पेशे से कोई मुताल्लिक़ हो, हम अपने पेशे तक दीने इस्लाम की बात पहुंचाए, सफ़र में हों तो साथियों से दीनी बातें करें, ग़रज़ कि हम मुहब्बत, हिकमत, जज़्बा–ए–ख़ैरख़्वाही और बेलौस ख़िदमत के सहारे बिरादराने वतन के दिलों तक पहुंचे और इस फ़रीज़े को अदा करें, जिसके लिए अल्लाह ने हमें इन्सान की इस बस्ती में बसाया है, बल्कि अपने पैग़म्बर का जांनशीन बनाया है। पिछली तक़रीबन दो दहाई से ख़ासकर बाबरी मस्जिद की शहादत के वाक़्ये के बाद से मुख़्तलिफ़ तंज़ीमें और मुख़्तलिफ़ शख़्सियतों ने दावत के काम की तरफ़ जो तवज्जो दी है, अल्लाह के शुक्र से उसके बड़े मुसबत असरात ज़ाहिर हो रहे हैं। इसलिए अगरचे यह काम बज़ाहिर दुश्वार गुज़ार मालूम हो रहा है लेकिन इतना मुश्किल भी नहीं है जितना लोगों ने समझ लिया है। वक़्त आ गया है कि हर मुसलमान अपने गिरेबान में झांककर देखे और ग़ौर करे कि क्या उसने इस फ़र्ज़े मन्सबी को अदा करने की ज़रा भी कोशिश की है? और अज़्म करे कि वह पूरी तवज्जो के साथ इस फ़रामोश करदा फ़रीज़े को अंजाम देगा, जिनके लिए हिदायत मुक़द्दर होगी' उनको हिदायत नसीब होगी।

इन्सानियत के बदलते पैमाने

मुहम्मद नफ़ीस ख़ाँ नदवी

आज की दुनिया में जंगों के उसूल बदल चुके हैं। जंगों के तरीक़ेकार और उनके मक़ासिद में भी नुमायां तब्दीली वाक़ेअ हो चुकी है। पहले जंगें बहादुरी की बुनियादों और मज़बूत जंगी हिकमते अमली के ज़रिये जीती जाती थीं। इन जंगों में बराहेरास्त वही मुतास्सिर होते थे जो मैदाने जंग में होते थे। बेगुनाह औरतें, मासूम बच्चे और मजबूर व लाचार लोग बड़ी हद तक महफ़ूज़ होते थे। लेकिन आज की जंगों में बेगुनाह और मासूम लोगों की ज़िन्दगियां सबसे ज़्यादा निशाना बनती हैं। ख़ासकर जंगबन्दी के बाद फैलने वाले ख़तरनाक बीमारियों का चाहे उनका जंगों से दूर का भी ताल्लुक़ न हो। इस एतबार से कहा जा सकता है कि पिछले ज़माने के मुक़ाबले आज की जंगों में तसलसुल से इन्सानी क़त्ल व लूटपाट होती है उससे पहले इसका तसव्वुर भी न था।

जंगी पैमानों के साथ मज़हबी पैमाने भी बदल चुके हैं। मज़हब के नाम पर ख़ास तबक़े को निशाना बनाया जाता है। अलामतों के ज़रिये निशानदेही की जाती है फिर मुख़्तलिफ़ मैदानों में टारगेट किया जाता है। सियासी व मआशी सतह पर कमज़ोर करने की कोशिश की जाती है। उनके मज़हबी मक़ामात को मिस्मार करने की साज़िश रची जाती है और जब इससे भी सुकून नहीं मिलता तो कोई जुनूनी भीड़ आगे बढ़ती है और किसी राह चलते इन्सान पर टूट पड़ती है और उसके ख़ून से अपनी मज़हबी प्यास बुझाकर मुतमईन हो जाती है, कि उसने अपने मज़हब की बड़ी ख़िदमत अंजाम दे दी। जबकि वह दौर भी था जब क़ौमों और मुल्कों को फ़तेह करने वाली मुस्लिम क़ौम सबसे पहले महकूमों के मज़हबी मक़ामात को तहफ़्फ़ुज़ फ़राहम करती थी। उनके वज़ीफ़े तय करती थी और ख़ौफ़ व दहशत के बजाए अपने आला अख़्लाक़ और अपनी अख़लाक़ पसंदी से अपने मज़हब की इशाअत करती थी।

एक तरफ़ यह दावा किया जाता है कि आज का दौर अमन व सलामती का दौर है लेकिन शायद सबसे ज़्यादा इन्सान आज के दौर में ही ग़ैरमहफ़ूज़ है। सुबह को इन्सान घर से निकले तो उसकी कोई गारंटी नहीं कि वह शाम को सही सलामत घर लौटेगा। न तफ़रीह गाहें महफ़ूज़ हैं और गुज़रगाहें मामून हैं। बल्कि कहा जा सकता है कि इन्सान एक ख़ौफ़ के आलम में जी रहा है। एक ऐसी ज़िन्दगी जिसमें ज़िन्दगी की कोई चमक नहीं।

इस दौर का इन्सान एक अजीब दौर से गुज़र रहा है। साइंसी तरक़्क़ियात ने इन्सानी ज़िन्दगी को जिस क़द्र पुरतईश और आरामदेह बना दिया है कि गुज़िश्ता दौर का इन्सान उसका तसव्वुर भी नहीं कर सकता था। आसूदगी के लिए उसने ज़मीन के ख़ज़ाने तलाश कर डाले और जिस क़द्र सरमाया और वसाएल पर कुदरत हासिल कर ली है उसका कभी गुमान भी नहीं किया जा सकता था लेकिन फिर भी आज का इन्सान इस क़द्र भूखा है कि तारीख़ में इतना भूखा कभी न था।

गुज़िश्ता अदवार में बादशाहों के महल्लात जितने भी शानदार रहे होंगे न वह ख़ुद को मौसम की शिद्दत से बचा सकते थे और न सफ़र के दौरान घोड़े, ऊंट और हाथी के हिचकोलों से ख़ुद को बचा सकते थे। अपने फ़ौजियों व मातहतों से पैग़ाम रसानी में उन्हें हफ़्ता–दस दिन और कभी–कभी साल भी लग जाते थे लेकिन आज के इन्सान का हाल यह है कि जिस जगह आसमान से बर्फ़बारी हो रही होती है वहां वह गर्म कमरे में बैठा हुआ आइसक्रीम के मज़े ले रहा होता है। गुदाज़ सोफ़ों पर पैर फैलाए ख़्वाबे ख़रगोश के मज़े लूटते हुए वह चंद घंटों में सैंकड़ों मील का सफ़र तय कर लेता है। वह हज़ारों मील दूर से अपने अहले ख़ाना और अहले ताल्लुक़ की बातें भी सुन सकता है और उन्हें देख भी सकता है, लेकिन मजमूई हैसियत से आज का इन्सान जिस क़द्र बेचैन–बेकल और

परेशान है इतना माज़ी में कभी न था। इसका अंदाज़ा इस बात से लगाया जा सकता है कि आज सिक्योरिटी फ़राहम करने वाली ख़ुफ़िया एजेंसियां इस क़द्र हस्साअ और तेज़–तर्रार हैं कि सैकड़ों मील दूर से इन्सान की हरकात व सकनात नोट कर लेती हैं लेकिन अमरीका जैसे मुल्क में ऐसे शहर भी हैं जहां पुलिस और दूसरे सिक्योरिटी इदारे अपने शहरियों को इन्तिबाह करते हैं कि रात को फ़लां वक़्त के बाद वह इनकी हिफ़ाज़त करने से क़ासिर हैं। जबकि माज़ी में ऐसी मिसालें भी मौजूद हैं कि जब एक औरत ज़ेवरात से लदी अपनी जान व माल और इज़्ज़त व आबरू की हिफ़ाज़त के साथ सेहरा पार कर लेती थीं और उसे सिवाय ख़ुदा के किसी का ख़ौफ़ नहीं रहता था।

आज के इन्सान और माज़ी के इन्सान में ख़ासा फ़र्क़ मौजूद है। आज का इन्सान सिर्फ़ आज का होकर रह गया है। या यूं कहिये कि आज की माद्दी तरक़्क़ियात की चमक के सामने उसके दिल की निगाहें बेनूर हो गयी हैं। वह चीज़ों का ज़ाहिर तो देख सकता है लेकिन उन चीज़ों की हक़ीक़त का शऊर हासिल करने से महरूम हो गया है। वह खुली आंखों से दुनिया की चमक–दमक देख सकता है लेकिन दुनिया के अंजाम से ग़ाफ़िल हो चुका है। पेट की आग बुझाते–बुझाते वह जहन्नम की आग भूल चुका है। दुनिया की लज़्ज़तों में इस क़द्र खो चुका है कि ख़ालिक़े कायनात को भूल बैठा है और सरमाया परस्ती में ग़र्क़ हो गया है, बल्कि कहा जा सकता है कि आज की बुराइयां पिछले दिनों के मुक़ाबले कहीं ज़्यादा संगीन और आम हो चुकी हैं। हालांकि वसाएल की फ़रावानी, रिज़्क़ की बोहतात और सिनअती इन्क़िलाब से इन्सान को बकसरत सहूलतें मुहैया हैं जिनके नतीजे में बुराइयों का ग्राफ़ कम होना चाहिए था लेकिन उन तरक़्क़ियात के नतीजों में बुराइयों में और इज़ाफ़ा होता चला गया, बल्कि उन बुराइयों ने समाज में इज़्ज़त व शराफ़त की पहचान हासिल कर ली जिन बुराइयों से लोग पहले घिन करते थे अब वह तरक़्क़ी पसंदी की अलामत समझीं जाने लगी हैं और उन बुराइयों की शनाअत के पैमाने भी तय किये जा रहे हैं। अगर कोई मामूली तबक़े का इन्सान एक बुराई करता है तो उसकी संगीनी ज़्यादा महसूस की जाती है। लेकिन अगर वही बुराई कोई साहिबे हैसियत करे तो उसको हुनर मंदी व फ़नकारी से ताबीर किया जाता है। बक़ौल शायरः

जिनके घर में अमीरी का शजर लगता है।
उनका हर ऐब ज़माने को हुनर लगता है।।

क़िस्सा मुख़्तसर बेतहाशा माद्दी वसाएल, इन्तिाई पुरतईश ज़िन्दगी और आला तरीन जंगी वसाएल की फ़रावानी इन्सान को चैन व सुकून फ़राहम करने से क़ासिर हैं। बल्कि सुकून की तलाश में वह नशे में धुत रहता है और मदहोशी के मुख़्तलिफ़ तरीक़े अख़्तियार करता है कि दुनिया के हक़ाएक़ से ज़्यादा से ज़्यादा दूर रहा जाए। लेकिन यह सूरतेहाल मसाएल को हर करने के लिए नाकाफ़ी है। यह वह तरीक़ा–ए–इलाज है जिससे शिफ़ा मुमकिन नहीं। इलाज का वह तरीक़ा मर्ज़ को और संगीन करता जाएगा। नए–नए तर्जुबात और नई–नई हक़ीक़तों के ज़रिये दिल के सुकून की तलाश महज़ वक़्त को ज़ाया करना है।

तारीख़ी शहादतें मौजूद हैं कि हक़ीक़ी राहत और दिल के सुकून की तलाश में इन्सान ने हमेशा फ़ितरत से बग़ावत की है। उसने क़दम–क़दम पर ठोकरें खाईं है। हर हर आस्ताने पर माथा टेका और हर–हर दर पर अपना सर फोड़ा है। वह कभी पहाड़ की बुलन्दियों पर चढ़ गया, कभी समन्दर की तहों में उतर गया और कभी भटकते–भटकते जंगलों में जा बसा लेकिन उसकी मुराद वहां भी पूरी न हुई और वह दिल के सुकून के लिए तड़पता रहा। इस तरक़्क़ीयाफ़्ता दुनिया ने भी मुख़्तलिफ़ इज़्म अख़्तियार किये हैं। मुख़्तलिफ़ वसाएल में सुकून की तलाश की है। मुख़्तलिफ़ तहरीक़ों और जमाअतों से उसने ज़हनी व क़ल्बी राहत हासिल करने की कोशिश की है लेकिन हर दर से उसे मायूसी का सामना करना पड़ा। बल्कि हर कोशिश के बाद उसके इज़्तिराब व बेचैनी में बढ़ोत्तरी ही हुई।

सारे तर्जुबों और सारे नुस्ख़ों के बाद उसके सामने सिर्फ़ एक ही नुस्ख़ा है, जिसे जब भी अख़्तियार किया गया दुनिया जन्नत का निशान बन गयी। इन्सानियत आज भी उसी दर की मोहताज है। हक़ीक़ी सुकून उसी दर से नसीब होगा जिसका तरीक़ा कुरआन ने अपने बलीग़ अंदाज़ में बयान किया हैः

"इस्लाम में पूरे के पूरे दाख़िल हो जाओ।" हक़ीक़ी सुकून का यही वह पैमाना है जिसमें कोई तब्दीली नहीं!

इस्लाही ख़ुतबात

इस्लाम के तब्बीक़ी पहलू पर तवज्जो की ज़रूरत

मौलाना मुफ़्ती तक़ी उस्मानी साहब

"आज हमारी तवज्जो सियासत की तरफ़ है, मईशत की तरफ़ भी है, मुआशरत की तरफ़ भी है, लेकिन फ़र्द की तामीर के लिए और फ़र्द की इस्लाह के लिए इदारे नायाब है, इल्ला माशा अल्लाह! इस वजह से आज हमारी तहरीकें कामयाब नहीं हो रही हैं, किसी न किसी मरहले पर जाकर नाकाम हो जाती हैं, यह नाकामी बाज़ औक़ात इसलिए होती है कि ख़ुद हमारे आपस में फूट पड़ जाती है और लड़ाई–झगड़ा शुरू हो जाता है।

हमारी नाकामी का दूसरा सबब मेरी नज़र में यह है कि इस्लाम के ततबीक़ी पहलू पर हमारा काम या तो मफ़कूद है, या कम से कम नाकाफ़ी है, इससे मेरी मुराद यह है कि एक तरफ़ तो हमने इज्तिमाइयत पर इतना ज़ोर दिया है कि अमलन उसी को इस्लाम का कुल क़रार दिया है और दूसरी तरफ़ इस पहलू पर कमाहक़ा ज़ोर नहीं दिया और न उसके लिए कोई लाहयाए अमल तैयार किया तो वह नाकाफ़ी था, मैं यह नहीं कहता कि ख़ुदा न करे इस्लाम इस दौर में क़ाबिले अमल नहीं है, इस्लाम की तालीमात किसी बशरी ज़हन की पैदावार नहीं, यह उस मालिकुल मुल्क वलमलकूत के एहकाम हैं जिसके इल्म व कुदरत से ज़मान व मकान का कोई हिस्सा ख़ारिज नहीं, लिहाज़ा जो शख़्स इस्लाम को इस दौर में नाक़ाबिले अमल क़रार दे, वह दायरे इस्लाम में नहीं रह सकता, लेकिन ज़ाहिर है कि इस्लाम को इस दौर में बरपा और नाफ़िज़ करने के लिए कोई तरीक़ेकार अख़्तियार करना होगा, इस तरीक़ेकार के बारे में संजीदा तहक़ीक़ और हक़ीक़त पसंदाना ग़ौर व फ़िक्र और तहक़ीक़ की कमी है। हम इस्लाम के लिए काम कर रहे हैं, इसके लिए जद्दोजहद कर रहे हैं और इसके अमली निफ़ाज़ के लिए तहरीक चला रहे हैं, लेकिन तहरीक चलाने से पहले और तहरीक के दौरान सबके ज़हनो में यह बात हो कि इस्लाम के निफ़ाज़ के माने यह हैं कि कुरआन और सुन्नत को नाफ़िज़ कर देंगे, मगर यह बात याद रखिए कि जब इस्लामी एहकाम को मौजूदा ज़िन्दगी पर नाफ़िज़ किया जाएगा तो यक़ीनन उसका कोई तरीक़े कार तय करना होगा, देखना यह होगा कि वह ततबीक़ का तरीक़ा क्या होगा? और आज हम इस्लाम के उन अबदी और सरमदी उसूलों को किस तरह नाफ़िज़ करेंगे? इसके बारे में हम अभी तक ऐसा सोचा–समझा लाहया–ए–अमल तैयार नहीं कर सके जिसके बारे में हम यह कह सकें कि यह पुख़्ता तरीक़ा कार है, इसके लिए कोशिश बिला शुब्हा पूरे आलमे इस्लाम में और ख़ुद हमारे मुल्क में हो रही हैं, लेकिन किसी कोशिश को यह नहीं कहा जा सकता कि वह हतमी और आख़िरी है।

मौजूदा दौर में इस्लाम की ततबीक़ सोचने के तरीक़े के माने यह नहीं हैं कि इस्लाम पर अमले जर्राही शुरू कर दिया जाए और इसमें कतर व बयूनत करके इसे मग़्रिबी तसव्वुरात के ढांचे में ढाल दिया जाए, बल्कि मतलब यह है कि इस्लाम के तमाम उसूल और एहकाम अपनी जगह बाक़ी रहें, उनके अन्दर कोई तब्दीली न हो, लेकिन यह बात तय की जाए कि जब उन उसूलों को इस दौर में बरपा किया जाएगा तो इस सूरत में इसका अमली तरीक़ा–ए–कार क्या होगा?"

R.N.I. No.
UPHIN/2009/30527

Monthly
ARAFAT KIRAN
Raebareli

Issue: 06 June 2022 Volume: 14

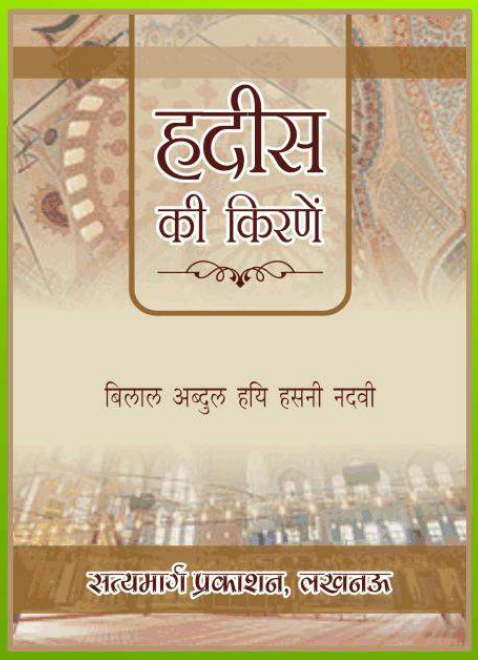

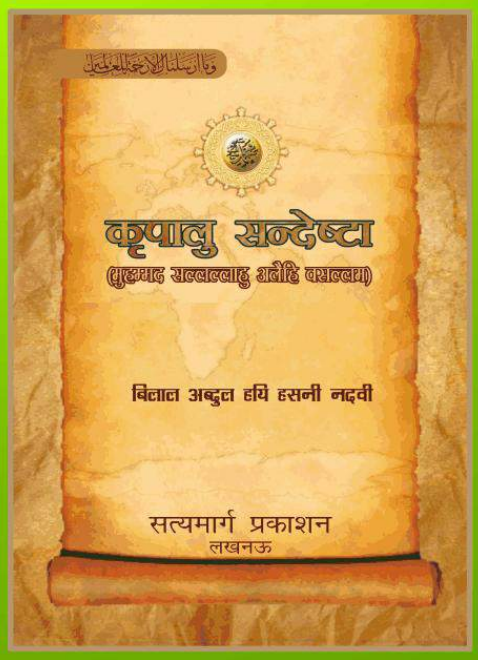

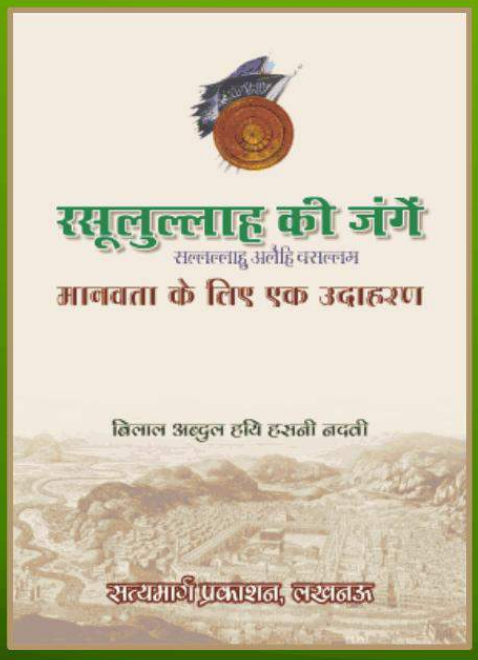

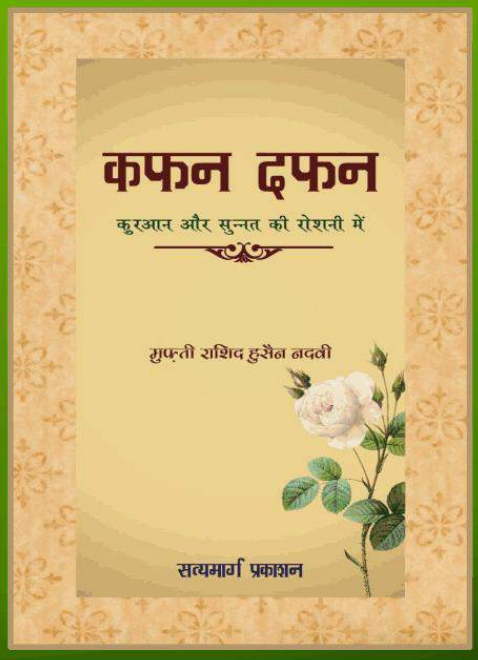

Editor: Bilal Abdul Hai Hasani Nadwi
MARKAZUL IMAM ABIL HASAN AL-NADWI
Dare Arafat, Takiya Kalan, Raebareli, U.P.
Mobile:9565271812
E-Mail: markazulimam@gmail.com
www.abulhasanalinadwi.org

Printed & Published by: Mohammad Hasan Nadwi
On Behalf of: Markazul Imam Abil Hasan Al-Nadwi
Printed at S.A. Offset Printers, Masjid ke peeche,Phatak Abdullah Khan, Sabzi Mandi, Station Road, Raebareli, U.P.